सर्वहारा दृष्टिकोण

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया (कम्युनिस्ट) का मुखपत्र (पाक्षिक)

वर्ष-33 अंक-15 | 7 से 21 अगस्त, 2018 | मुख्य संपादक कॉमरेड प्रभास घोष | कुल पृष्ठ 8 | मूल्य : 2 रुपये

कॉमरेड शिवदास घोष चिंतनधारा जिन्दाबाद!

सर्वहारा के महान नेता कॉमरेड शिवदास घोष के 42वें स्मरण दिवस 5 अगस्त के अवसर पर हम उनकी पुस्तिका 'भारत में सांस्कृतिक आंदोलन और हमारा कर्तव्य' का एक अंश प्रकाशित कर रहे हैं।

आप चाहे लाख कोशिश करें, फिर भी आदर्श, रुचि और मूल्यबोध के किसी एक विशेष उन्नततर मान को एक ही जगह ठहराये नहीं रख सकते। चाहे वह शरत्चंद्र, नजरूल, रवीन्द्रनाथ की रुचि का मान हो; या बुद्ध, शंकराचार्य, ईसा या मुहम्मद का या फिर मार्क्स, एँगेल्स या लेनिन का ही हो–उनके कोई भी सिद्धांत एवं मूल्यबोध की धारणा क्यों न हो, उसे एक ही जगह टिकाये रखने की कोशिश होने से ही वह प्रतिक्रियावादी हो जाएगी। एक और विषय पर चर्चा कर लेने से यह बात ज्यादा साफ हो जाएगी। हम लोग मानसिकता कहने से क्या समझते हैं? आखिर विचार एवं भाव क्या है? एक तरफ व्यक्ति-मस्तिष्क और विश्व-प्रकृति के बीच हमेशा होते रहने वाला द्वंद्व-संघात और दूसरी तरफ व्यक्ति-मस्तिष्क का उसके निजी सामाजिक परिवेश के साथ द्वंद्व–इन दोनों द्वंद्वों के फलस्वरूप ही व्यक्ति की मननशीलता और चिंतन का विकास होता रहता है। पूरे मानव समाज के इन विचारों या व्यक्ति-मननशीलता के सामान्यीकरण (generalisation) के माध्यम से ही सामाजिक मानसिकता पैदा होती है, जिसे हम संक्षेप में सामाजिक चिंतन या सामाजिक मनन कह सकते हैं। फिर एक तरफ सामाजिक चिन्तन-मनन के आंतरिक द्वंद्व और उसके साथ विश्व-प्रकृति एवं बाहरी जगत के द्वंद्व के जरिए ही लगातार मनुष्य की मानसिकता का विकास तथा भाव-जगत की सृष्टि होती जा रही है। कोई भी इस द्वंद्व को एक ही जगह बांधे नहीं रख सकता। तमाम मनुष्यों की मननशीलता के ये जो दो प्रकार के द्वंद्व हैं, इन्हें यदि हम एक ही जगह बांधे रख सकते, तो विचार-जगत को भी एक ही जगह बांधे रखना सम्भव होता। इसलिए किसी को भी एक ही जगह रोकने की गुंजाइश नहीं है। अत: जितनी भी प्रगतिशील भावना-धारणा क्यों न हो, जहाँ उसे चिरस्थायी बनाकर एक ही जगह ठहराये रखने का प्रयास हुआ वहीं उसका अर्थ कुछ और हो जाता है, वह प्रतिक्रियावादी हो जाती है।

5 अगस्त 1923 --- 5 अगस्त 1976

हमने पहले ही चर्चा है कि गति दो प्रकार की होती है–जो हमें सामने ठेलनेवाली है वह प्रगतिशील और जो पीछे खींचनेवाली है वह प्रतिक्रियावादी। आज जो आदर्श मौजूदा सामाजिक जरूरत यानी प्रगति के परिपूरक के अर्थ में सबसे उन्नत चेतना के स्तर को व्यक्त कर रहा है, स्थिति के परिवर्तन के साथ-साथ अर्थात् पैदावार के साधन और जीवन पद्धति के बदलने के साथ-साथ जो नयी आवश्यकताएँ जन्म ले रही हैं, उनके साथ सामंजस्य रखते हुए अगर हम लोग अपनी भावना-धारणा, चिंतन, विचार-पद्धति और मूल्यबोधों को लगातार परिवर्तित और उन्नत न कर सकें, तो क्या होता है? एक समय का प्रगतिशील आदर्श बाद के जमाने में, बदली हुई स्थिति में उत्पादन और जीवन-पद्धति के पलट जाने के साथ-साथ नयी आवश्यकताओं या प्रयोजनबोध की कसौटी पर प्रतिक्रियावादी हो जाता है और निरंतर हमें पीछे की ओर खींचने लग जाता है। तमाम आदर्शों का इसी तरह मूल्यांकन करना चाहिए। इसी तरह आदिम समाज से मनुष्य के चिंतन और उसका विचार-जगत स्तर-दर-स्तर एक से दूसरे और भी उन्नत स्तर पर अग्रसर होते हुए हम आधुनिक चिंतन और भावना-धारणाओं तक पहुँच पाये हैं। यदि यह बात न मानी जाये तो मैं समझता हूँ कि मेरे एक प्रश्न का जवाब आप में से कोई न दे सकेंगे। जैसे मान लीजिए, बुद्ध, शंकराचार्य, ईसा, मुहम्मद–इतिहास के विभिन्न काल में इन महापुरुषों के आविर्भाव की बात हम सभी जानते हैं। जो धार्मिक लोग हैं, वे उन्हें निश्चय ही 'प्रॉफेट' (अवतार या पैगम्बर) मानते हैं, ईश्वर का पुत्र मानते हैं, या ईश्वर द्वारा प्रेषित दूत मानते हैं। परन्तु जो आधुनिक चिंतन से सम्पन्न मानवतावादी हैं, वे उन्हें महापुरुष और उत्कृष्ट व्यक्तित्व सम्पन्न मनुष्य ही मानते हैं। आजकल हम जिन्हें बात-बात में महापुरुष कह दिया करते

(शेष पृष्ठ 2 पर)

असम में ड्राफ्ट एनआरसी से जायज भारतीयों के नाम जानबूझ कर निकाल देने की एसयूसीआई(सी) ने की कड़ी निंदा

रजिस्टर में सभी नामों को तुरंत शामिल करने की उठाई मांग

31 जुलाई को सोशलिस्ट यूनिटी सेंटर ऑफ इंडिया (कम्युनिस्ट) के महासचिव कॉमरेड प्रभास घोष ने असम में प्रकाशित एनआरसी (राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर) के सम्बंध में निम्नलिखित बयान जारी किया :

मीडिया रिपोर्ट से यह जानकार हमें गहरा धक्का लगा है कि 30 जुलाई 2018 को प्रकाशित राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (एनआरसी) ड्राफ्ट में 40 लाख से ज्यादा जायज भारतीय नागरिकों के नाम शामिल नहीं हैं। इनमें से ज्यादातर धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक हैं। पहले के तमाम सर्वेक्षणों से, यहां तक कि खुद असम गण परिषद-नीत राज्य सरकार द्वारा विशेषकर 1985 से की गई छानबीन की कवायद से ऐसे एक व्यापक बहिष्कार का कतई कोई सामंजस्य नहीं है। इस सम्बंध में ज्ञात रहे कि 1985 और उसके बाद के किसी भी सर्वेक्षण व छानबीन का कार्य भी नस्ली-धर्मीय-भाषाई पूर्वाग्रह से मुक्त नहीं था और मनमाने व षड्यंत्रपूर्ण तरीके से जायज भारतीय नागरिकों के एक बड़े तबके को 'डी' वोटरों (डाउटफुल वोटरों) के रूप में वर्गीकृत करके उन्हें मौलिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया था। फिर भी ऐसे विवादास्पद 'डी' वोटरों की संख्या भी 3.7 लाख से अधिक नहीं थी। इस पृष्ठभूमि में 40 लाख से अधिक लोगों को नागरिकता से वंचित करने का आंकड़ा न सिर्फ अविश्वसनीय है बल्कि जैसा कि अंदेशा था

(शेष पृष्ठ 8 पर)

ज्वलंत शैक्षणिक सवालों को लेकर झारखण्ड विधानसभा के समक्ष छात्रों का विशाल विक्षोभ प्रदर्शन

रांची : ज्वलंत शैक्षणिक सवालों को लेकर 20 जुलाई को झारखंड विधानसभा के समक्ष विशाल छात्र प्रदर्शन किया गया। सरकारी स्कूलों को बंद करने, शिक्षकों की भारी कमी, सत्र अनियमितता, यूजी-पीजी में सीट कटौती, अवैज्ञानिक सीबीसीएस व सेमेस्टर सिस्टम एवं निजी स्कूलों की मनमानी फीस वृद्धि के खिलाफ ऑल इंडिया डीएसओ झारखंड राज्य कमेटी की ओर से यह प्रदर्शन किया गया। राज्यभर से आए छात्र-छात्राएं रांची डोरंडा कॉलेज में जुटे और वहीं से जुलूस की शक्ल में हिनू चौक होते हुए बिरसा चौक पहुंचे जहां जुलूस सभा में तब्दील हो गया। संगठन के प्रतिनिधिमंडल ने मुख्यमंत्री के नाम विधानसभा अध्यक्ष को ज्ञापन सौंपा।

सभा को संबोधित करते हुए संगठन की राज्य अध्यक्ष आशारानी पाल ने कहा की झारखंड की सरकार विलय के नाम पर सरकारी स्कूल-कॉलेजों को बंद कर रही है और शिक्षा के क्षेत्र में खर्च करने से भी मुकर रही है। सरकारी स्कूल-कॉलेज को जानबूझकर बदहाल किया जा रहा है। स्कूल-कॉलेजों में शिक्षकों एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों का घोर अभाव है। स्नातक एवं स्नातकोत्तर की पढ़ाई के लिए राज्य के कॉलेजों में प्रयाप्त मात्रा में सीटें नहीं हैं। विश्वविद्यालय में सत्र नियमित नहीं हैं। स्नातक के विद्यार्थी 4 साल में डिग्री प्राप्त कर रहे हैं एवं स्नातकोत्तर के विद्यार्थी 3 साल में डिग्री प्राप्त कर रहे हैं। विश्वविद्यालय में सीबीसीएस व सेमेस्टर सिस्टम लागू करने से पढ़ाई पूरी तरह से समाप्त हो गई है। विश्वविद्यालय का काम केवल परीक्षाएं लेना ही रह गया है। राज्य में दिन प्रतिदिन छात्राओं पर अत्याचार बढ़ रहे हैं। निजी स्कूल-कॉलेजों की मनमानी बेतहाशा फीस वृद्धि हो रही है। ऐसी परिस्थिति में आज विद्यार्थियों के लिए सड़क पर उतरकर आंदोलन करने के सिवा और कोई रास्ता नहीं बचा है। संगठन के प्रदेश सचिव समर महतो और अखिल भारतीय कोषाध्यक्ष कां. सौरभ घोष उपस्थित थे।

प्रदर्शन का नेतृत्व संगठन की राज्य अध्यक्ष आशा रानी पाल, संगठन के प्रदेश सचिव समर महतो, संगठन के प्रदेश कार्यालय सचिव जीवन कुमार यादव, प्रदेश कोषाध्यक्ष सोहन महतो एवं प्रदेश वरिष्ठ उपाध्यक्ष आशीष कुमार, श्रीमंत बारीक, युधिष्ठिर कुमार, प्रवीण कुमार महतो एवं विभिन्न राज्यों के स्कूल-कॉलेज के छात्र नेताओं कर रहे थे। इस प्रदर्शन में राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं स्कूल- कॉलेज के छात्र-छात्राएं भारी संख्या में शामिल हुए।

रांची : शिक्षा की ज्वलंत समस्याओं पर प्रदर्शन करते हुए एआईडीएसओ कार्यकर्ता

कॉ. शिवदास घोष चिंतनधारा जिन्दाबाद!

(पृष्ठ 1 का शेष)

हैं, उन महापुरुषों से इनकी कोई तुलना ही नहीं हो सकती। तत्कालीन परिस्थिति में वे लोग जो अपनी प्रतिभा का प्रमाण छोड़ गये हैं, तुलनात्मक दृष्टि से हम में से कितने लोग आज की परिस्थिति में वैसी प्रतिभा का परिचय दे पा रहे हैं! लेकिन जरा-सा ध्यान देने पर आपकी नजर में एक चीज पड़ेगी। जिस आधुनिक चिंतनधारा और भावना-धारणाओं का आज आप परिपोषण करते हैं, बुद्ध, शंकराचार्य, मुहम्मद जैसे महान प्रतिभाशाली व्यक्तियों की मननशीलता द्वारा उन्हें पैदा करना सम्भव न हुआ था। अत्यन्त उच्च स्तर की मननशीलता रहने के बावजूद वे आधुनिक भावना-धारणाओं को जन्म नहीं दे सके।

जैसे मान लीजिए, आधुनिक जनवादी चेतना, जनतांत्रिक समाज-गठन, 'सेक्युलरीज्म' (धर्मनिरपेक्षता), 'सेक्युलर ह्युमैनीज्म' (धर्मनिरपेक्ष या वस्तुनिष्ठ मानवतावाद) आदि भावना-धारणा एवं आदर्श की बातों और इन पर आधारित जिन नये मूल्यबोधों–व्यक्ति-स्वतंत्रता, नारी स्वतंत्रता, 'लिबर्टी' और 'फ्रीडम', आदि की बात यदि लें, तो देखेंगे कि औद्योगिक क्रांति या पूँजीवादी क्रांति के आधार पर उत्पादन व्यवस्था बदल जाने के साथ-साथ इन सब आधुनिक भावना-धारणाओं का जन्म हुआ–इन बातों को आधुनिक दुनिया के स्कूली विद्यार्थी भी थोड़ा-बहुत जानते हैं जबकि बुद्ध, शंकराचार्य, ईसा जैसे प्रतिभाशाली लोगों के बूते यह सब चिंतन करना सम्भव न हुआ। लेकिन यह इसलिए नहीं कि हमसे उनकी प्रतिभा कोई कम थी; या वे लोग उच्च चिंतन नहीं कर सकते थे। बल्कि इसकी वजह यह है कि सभी मनुष्यों के चिंतन की 'मेटिरियल कनडिशन' (भौतिक परिस्थिति) पहले मौजूद होती है और तभी उसके विचार-जगत की पैदाइश होती है और मनुष्य की चिंतन शक्ति की सापेक्ष स्वतंत्रता की यही सीमा है। इस सत्य को जो नहीं मानते उनसे मैं कहता हूँ कि वे मेरे इस सवाल का जवाब दें–आज के जो सब 'लॉफ्टी आइडियल्स' (उच्च आदर्श) या आधुनिक भावना-धारणाएँ हमें हासिल हैं, आखिर ये उस दिन उनके ज़ेहन में क्यों नहीं पैदा हुई। जो लोग चिंतन की सीमाहीन (एब्सोल्यूट) स्वाधीनता में विश्वास रखते हैं, जो यह मानते हैं कि 'स्वतंत्र चिंतनसत्ता' ही व्यक्ति को केन्द्र कर विचार-जगत की सृष्टि करती आ रही है, उन्हें मेरे इस सवाल का सामना करना पड़ेगा और इसका जवाब देना पड़ेगा। इस सवाल से रूबरू होते ही वे समझ सकेंगे कि चिंतन शक्ति की 'सीमाहीन स्वतंत्रता' की यह धारणा एकदम गलत व निराधार है। दरअसल हर व्यक्ति के चिंतन की एक सापेक्ष स्वतंत्रता है; और फिर उसकी एक सीमा भी है। वह सीमा –यह भौतिक परिस्थिति की सीमा है।

तब हम क्या देख रहे हैं? आपका चिंतन, मेरा चिंतन, अजय दादा☆ का चिंतन या जिस किसी व्यक्ति का चिंतन –दरअसल यह सब क्या है? आखिर विभिन्न व्यक्तियों की विचारधारा का निर्माण किस प्रकार हो रहा है? इसे समझने के लिए हमें सबसे पहले यह जानना जरूरी है कि सामाजिक चिंतन से दरअसल क्या समझा जाता है? सामाजिक चिंतन या 'सोशल थिंकिंग' से हम लोग एक विशेष समाज के एक सुनिश्चित वैचारिक सांस्कृतिक परिमंडल (Distinct Ideological Cultural Category) को ही समझते हैं–जिसके अंदर विभिन्न परस्पर विरोधी विचारधाराओं और भावना-धारणाओं का द्वंद्व-संघात लगातार चल रहा है। यह द्वंद्व-संघात क्यों चल रहा है, किस प्रकार चल रहा है–इसके बारे में किसी का चाहे जो भी तत्व-सिद्धांत क्यों न रहे, फिर भी एक सामाजिक चिंतन के परिमंडल (category) के अंतर्गत ही बहुत तरह के चिंतन रहते हैं–शायद इस पर कोई दो मत नहीं। एक ही परिस्थिति या परिवेश के अंतर्गत नाना भावना-धारणाओं, विचारधाराओं और उनके बीच द्वंद्व-संघर्षों को लेकर ही हम लोग सामाजिक चिंतन का एक परिमंडल या 'कैटेगरी' समझते हैं। तमाम लोगों के चिंतन में उसी सामाजिक चिंतन का व्यक्तिकरण हो रहा है, 'पर्सोनीफिकेशन' हो रहा है। इस व्यक्तिकृत सामाजिक चिंतन को ही हम लोग व्यक्ति-चिंतन (Individual Thinking) कहते हैं। शंकराचार्य का चिन्तन भी इसी प्रकार निर्मित हुआ है, ईसा मसीह का चिंतन भी इसी प्रकार निर्मित हुआ है। मोहम्मद का चिंतन भी इसी प्रकार निर्मित हुआ है। राजा राममोहन राय, नजरूल, शरत्चंद्र, रवीन्द्रनाथ तथा विभिन्न राजनीतिक चिंतनकारों का चिंतन भी इसी प्रकार निर्मित हुआ है। इससे बाहर जाने का कोई उपाय नहीं है। मनुष्य के मस्तिष्क के साथ सामाजिक परिवेश एवं बाहरी प्रकृति के द्वंद्व द्वारा यह सीमित है। इसीलिए मैं कह रहा था, कि यह जो मनुष्य का विचार जगत है, अर्थात् मनुष्य का चिंतन और भावना-धारणा का जगत है, वह वस्तुसत्ता से ही निर्मित हुआ है, भौतिक परिवेश के अनुसार ही निर्मित हुआ है–फिर भौतिक परिवेश के साथ यह द्वंद्व-संघर्षरत भी है। ऐसी बात नहीं है कि उत्पादन के साधन और जीवन यापन की पद्धति बदल रही है और साथ-ही-साथ मानव-मन और उसकी भावनाएँ भी अपने आप बदलती जा रही हैं। इस प्रकार की धारणा गलत है; यह मामला इस तरह का यांत्रिक नहीं है। दोनों का सम्बन्ध द्वंद्वात्मक है। हालाँकि भौतिक उत्पादन (मेटिरीयल प्रोडक्शन) के ऊपरी ढाँचे के रूप में ही मनुष्य का भावात्मक उत्पादन (स्पिरिचुअल प्रोडक्शन)–विचार-जगत का निर्माण हुआ है, सामाजिक चिंतन पैदा हो रहा है; फिर विचार-जगत एवं सामाजिक चिंतन भी भौतिक परिस्थिति के परिवर्तन के क्रम में लगातार अपना प्रभाव डालता आ रहा है। लेकिन किसी भी हालत में मनुष्य का विचार-जगत एक विशेष भौतिक परिवेश का अतिक्रमण नहीं कर सकता–उस सीमा को पार नहीं कर सकता। इसीलिए अतीत के किसी मनीषी द्वारा आधुनिक चिंतन और भावना-धारणाओं को जन्म देना सम्भव न हुआ।

बहुतेरे लोगों की धारणा यह है कि अतीत में मनीषी लोग जिन सब मतों की सृष्टि कर गये हैं, चूँकि उन्होंने मानव कल्याण की बात सोच कर ही किया है और चूँकि उनके दिल में समस्त मानवों के लिए ही हमदर्दी थी, लिहाजा वे सारे मत ही ह्युमैनिज्म यानी मानवतावाद हैं। आजकल अनेक प्रगतिशील सिद्धांत-तत्व वेत्ताओं को भी इस तरह की बातें कहते सुना जाता है। कुछ दिन पहले तक तो सैद्धांतिक चर्चा करने वाले प्रगतिशील सिद्धांत-तत्व वेत्ताओं द्वारा कम-से-कम इस तरह के ऊल-जलूल मंतव्य करते नहीं सुना। लेकिन, आजकल बहुत सारे सिद्धांत-तत्व वेत्ताओं के मुँह से सुनता हूँ, जैसेकि मानवतावाद तो अतीत काल से ही है! मैं कहना चाहता हूँ कि यह धारणा पूर्णत: भ्रान्त और अनैतिहासिक है। मनुष्य के विचार-जगत के इतिहास में मानवतावाद और मानवतावादी आदर्श कहने से सामाजिक विकास के एक विशेष स्तर के एक विशेष वैचारिक परिमंडल (डिस्टिंक्ट आइडिओलॉजिकल कैटेगरी) को ही समझा जाता है। लगता है कि इन सब पण्डितों ने मानवीय मतादर्श (Human Ideology) और 'मानवतावाद' को गड्डमड्ड कर डाला है। इनको समझना चाहिए था कि जो कुछ मानवीय है, वही मानवतावाद नहीं है (Anything humane is not Humanism)। हालाँकि मानव समाज में जब भी कोई मतवाद और आदर्श पैदा हुए हैं, वे मानव के लिए हुए हैं। उसे मुहम्मद ने पैदा किया हो, चार्वाक मुनि ने पैदा किया हो, कपिल मुनि या फिर शंकराचार्य ही ने पैदा किया हो, मानव समाज में मानव के लिए ही पैदा किया गया है। इस मायने में ये सभी मानवीय मतादर्श है। किंतु पूँजीवादी क्रांति ने जिस बुर्जुआ मानवतावाद को जन्म दिया, उस मानवतावाद और अतीत के मानवीय मतादर्शों में बुनियादी फर्क है। इस फर्क के विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत चर्चा में न जाकर केवल एक बात को रखने पर ही इस फर्क का स्वरूप स्पष्ट हो जाएगा।

मानवतावाद से पहले के निर्मित हुए प्राय: सभी मतादर्श ही ईश्वरीय या आध्यात्मिक (Spiritual) या धार्मिक मूल्यबोधों (रिलिजियस वैल्यूज) पर आधारित थे। अर्थात् सभी मनुष्य ईश्वर की संतान हैं; इसलिए उन सारे मतादर्शों की मूल बात थी सभी मनुष्यों के प्रति प्रेम और ममत्वबोध। ईश्वर की स्वीकृति से ही कतिपय मूल्यबोधों की सृष्टि–जिसे दर्शन की भाषा में हम 'प्रायोरी वैल्यूज' (पूर्व निर्धारित नीतिबोध) कहते हैं। मानवतावाद अर्थात् बुर्जुआ मानवतावाद ने उस समय जिन मूल्यबोधों को जन्म दिया था, वे मूलत: 'सेंटरिंग राउंड मैन'–मानव को केंद्र करके निर्मित हुए थे–उन दिनों मनुष्य का यथार्थ प्रयोजन और सामाजिक चेतना की स्वीकृति ही उन मूल्यबोधों का केन्द्र बिंदु थी। मानव समाज में पहले-पहल यही मानवतावाद धार्मिक विचारधारा और अतिप्राकृतिक सत्ता की स्वीकृति से पैदा हुए मूल्यबोधों के विरुद्ध 'सेक्युलर' एवं जनतांत्रिक भावना-धारणा और मूल्यबोध लाया था। 'सेक्युलर' शब्द का अर्थ होता है–पार्थिव। इसीलिए, 'ऑल सेक्युलर कन्सेप्ट्स स्टार्ट विद दि नॉन-रिकॉग्नीशन ऑफ एनी सुपर नेच्युरल एनटिटी' (तमाम पार्थिव, अर्थात वस्तुनिष्ठ चिंतनों का जन्म किसी भी अतिप्राकृत सत्ता की अस्वीकृति से होता है)। लेकिन हमारे देश भारत में 'सेक्युलर' राज्य का अर्थ आज कर दिया गया है–तमाम धर्मों को समान रूप से प्रोत्साहन देना। इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि ऐसा होने के पीछे हमारे मुल्क के राजनेताओं, चिंतकों और राजनीतिक नेताओं का सम्मिलित प्रयास रहा है। अन्यथा या तो हम लोग अनजाने में भूल कर रहे हैं या फिर जानबूझ कर भुला बैठे हैं कि 'सेक्युलर' राज्य-गठन की धारणा ही राजसत्ता, सामाजिक जीवन, आर्थिक जीवन, राजनैतिक आन्दोलन, सांस्कृतिक आन्दोलन–सभी कुछ को चर्च के प्रभाव से या धर्म के प्रभाव से मुक्त करने के लिए तैयार हुई थी। जीवन सम्बन्धी धर्मनिरपेक्ष जनतांत्रिक ध्यान-धारणाओं और धर्मनिरपेक्ष मानवतावाद का आधार यही है। कांग्रेसी राजनेताओं और बुर्जुआ चिंतकों की बात तो समझ में आती है लेकिन बहुत सारे तथाकथित मार्क्सवादी और कम्युनिस्ट नेताओं के चिंतन, भावना-धारणा, प्रतिदिन के आचरण और धार्मिक अनुष्ठानों को लगातार बढ़ते पृष्ठपोषण के जरिए 'धर्मनिरपेक्षता' के बारे में जो धारणा प्रकट हो रही है, उसे देखकर सचमुच अवाक् हो जाना पड़ता है। इन सब नेताओं ने हमारे देश में धर्मनिरपेक्ष राज्य का जो अर्थ ठहराया है, उससे किसी भी चिंतनशील व्यक्ति के मन में स्वाभाविक तौर पर ही एक प्रश्न पैदा होगा वह यह कि एक विशेष राज्य–पाकिस्तान को हम इस्लामी राज्य, धार्मिक राज्य (Islamic Theocratic State) कहेंगे; चूंकि वह इस्लाम धर्म का पृष्ठपोषण करता है, मगर यदि सभी धर्मों को संरक्षण एवं प्रोत्साहन देना ही भारतीय राजसत्ता का काम हो, तो इसे एक बहु धर्मीय राज्य (Multi Theocratic State) के अलावा और क्या कहा जायेगा?

धर्मनिरपेक्ष जनतंत्र (सेक्युलर डेमोक्रेसी) का सिद्धांत क्या है? अर्थात धर्मनिरपेक्ष जनतांत्रिक जीवन-पद्धति के मूल सिद्धांत (Principle) कौन से हैं? मैं समझता हूँ, इससे कोई इन्कार नहीं करेंगे, कि धर्मनिरपेक्ष धारणा या जीवन के धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों के निर्माण में शिक्षा एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा किया करती है। तब तो यही स्वभाविक है कि एक धर्मनिरपेक्ष राज्य में शिक्षा हमेशा धार्मिक मूल्यबोधों के विरुद्ध धर्मनिरपेक्ष मूल्यबोधों को 'अप-होल्ड' (बुलंद) करेगी। यदि हम सचमुच भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की मर्यादा देना चाहते हैं, तो शिक्षा-व्यवस्था को अवश्य ही धार्मिक विचारधारा के प्रभाव से पूरी तरह मुक्त करना होगा। परंतु असल में हमारे अपने इस तथाकथित 'सेक्यूलर' राज्य में हम क्या देख रहे हैं? शिक्षा-व्यवस्था को धार्मिक प्रभाव से मुक्त करने की बात तो दूर रही, उल्टे शिक्षा व्यवस्था में धार्मिक प्रभाव की, शैक्षणिक आयोजनों में धार्मिक आचार-अनुष्ठानों की भरमार होती है, यहाँ तक कि पाठ्य-पुस्तकों में भी धार्मिक प्रचार दिनों-दिन लगातार बढ़ता जा रहा है। इसलिए जो लोग आज शिक्षा पद्धति और शिक्षा व्यवस्था के जनतंत्रीकरण की मांग पर आधारित आन्दोलनों का संचालन कर रहे हैं, उन्हें सबसे पहले दो बातों को साफ-साफ समझ लेना होगा। पहली बात यह है कि शिक्षा को धार्मिक विचारधारा से पूर्णत: मुक्त करना होगा और दूसरी यह, कि शिक्षा सुधार का दृष्टिकोण पूँजीवादी शोषण से मुक्ति के लिए मजदूर वर्ग और दूसरे तबकों के शोषित जनसाधारण की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में रोज-रोज जो लड़ाइयाँ चल रही हैं–उनका परिपूरक है या नहीं, इसे विचार करके देख लेना होगा। फिर इन्हीं दो कसौटियों के आधार पर ही विचार करके देखना होगा कि शिक्षा-सुधार और शिक्षा-व्यवस्था के जनतंत्रीकरण का उद्देश्य लेकर चलने वाला कोई आन्दोलन प्रगतिशील है या प्रतिक्रियावादी। हमारे देश में शिक्षा सुधार के लिए बहुत सारे आयोग बैठे हैं। उन सभी आयोगों ने शिक्षा व्यवस्था में सुधार के नाना पहलुओं की छोटी-बड़ी बातों पर सिफारिशों से पन्ने-पर-पन्ने भर डाले हैं। परन्तु कभी भी उनके लिये यह सम्भव नहीं हुआ कि समस्या की असल जगह पर चोट करें। इसीलिए देश के अंदर नैतिकता के अध:पतन का असल कारण कोई भी नेता सही तौर पर नहीं पकड़ पा रहा है। बहुत सारे चिंतनशील व्यक्तियों व अनेक राजनीतिक नेताओं की धारणा है कि हम लोगों के आचरण में खामी है, इसीलिए यह सब हो रहा है। लेकिन मैं उन्हें एक बात की याद दिलाना चाहता हूँ–जो लोग ईमानदार हैं, जो लोग सचमुच समस्या को पकड़ने की कोशिश कर रहे हैं, वे यही सोच रहे हैं कि लोग सही ढंग से आचरण नहीं कर रहे हैं। व्यक्तिगत आचरण विधि अब और नहीं रही–सचमुच में ही नहीं रही, राजनीति में नहीं रही, शिक्षण संस्थानों में नहीं रही, प्रशासन में नहीं रही। सभी ऐसा महसूस कर रहे हैं; हम भी कर रहे हैं। लेकिन नहीं रही है, तो आखिर क्यों? अभी कुछ दिन पहले तो आजादी की लड़ाई के वक्त आप नेताओं ने छात्रों को 'फ्लावर्स ऑफ बंगाल' कहा था और वे झुण्ड के झुण्ड अपना 'कैरियर' छोड़ कर, पीछे खींचने वाली सारी बातों को अनसुनी कर, अपना सर्वस्व त्याग कर देश के लिए राजनीतिक आन्दोलन में कूद पड़े थे। छात्र उन दिनों शिक्षकों को आदर्श पुरुष समझते थे। फिर आज ऐसा क्यों नहीं समझते? वे छात्र कहाँ खो गये? तब क्या हमें यही बात मान लेनी होगी कि उस वक्त ईश्वर हम पर खुश थे; लिहाजा घर-घर में सपूतों को भेजते थे? और आज हम से खफा हो गए हैं, इसलिए जितने कपूत हैं, उन्हें ही चुन-चुन कर हमारे घरों में भेज रहे हैं? निश्चय ही आप लोगों में कोई इस तरह नहीं सोचते। तो आखिर पूरे देश की मानसिकता कैसे खराब हो गयी? नैतिक मान क्यों नीचे गिरता जा रहा है? हम लोग तो नैतिक मान को बढ़ाना ही चाह रहे हैं। हम लोग तो कह रहे हैं–देश की रक्षा करो, मेहनत करो, ईमानदार बनो। लेकिन जितना ही कह रहे हैं ईमानदार बनो, मेहनत करो, लोग उतना ही मोटे अर्थ में प्रयोजनवादी होते जा रहे हैं। आखिर ऐसा क्यों?

इस संदर्भ में एक और विषय पर मैं चर्चा करना चाहता हूँ। मैं देख रहा हूँ कि आजकल हमारे मुल्क में 'प्रैग्मेटिज्म' या 'प्रयोजनवाद' का प्रभाव, राजनीतिक आन्दोलन से लेकर सांस्कृतिक आन्दोलन के हर क्षेत्र में, दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। जिस प्रयोजन-तत्व या आवश्यकता की बात मार्क्सवाद और विज्ञान कहते हैं–यह 'प्रयोजनवाद' इसके बिल्कुल विपरीतधर्मी है। जीवन के हर क्षेत्र में आम तौर पर आज मोटे अर्थ में जिस 'प्रयोजनवाद' का प्रभाव दिख रहा है, शायद वह मार्क्सवाद की विकृति से ही शुरू हुआ है। क्योंकि मैं तो तथाकथित प्रगतिशीलों,

(शेष पृष्ठ 7 पर)

☆पश्चिम बंगाल में संयुक्त मोर्चा सरकार के तत्कालीन मुख्यमंत्री, जो उस सभा में उपस्थित थे।

असम में एनआरसी (नागरिकता का राष्ट्रीय रजिस्टर) लागू करने के पीछे असली उद्देश्य

आखिरकार, असम के लिए एनआरसी (नागरिकों का राष्ट्रीय रजिस्टर) का पहला ड्राफ्ट, 2017-18 भारत के सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के अनुसार 31 दिसंबर, 2017 की मध्यरात्रि तक प्रकाशित हो गया था। असम के लिए नागरिकता के राष्ट्रीय रजिस्टर में उन्नयन यानी सुधार भारत के सुप्रीम कोर्ट के पर्यवेक्षण के तहत भारत के रजिस्टर जनरल द्वारा किया गया है। पिछले तीन सालों से कवायद चल रही है। वर्तमान संचालन में, कुल 3.29 करोड़ आवेदकों ने एनआरसी में उनके नाम शामिल करने के लिए आवेदन किया था। लेकिन जब मसौदा सूची प्रकाशित हुई, तो यह देखा गया कि इसमें केवल 1.90 करोड़ नाम दर्ज हैं जबकि 1.39 करोड़ नाम गायब थे जिनमें यादातर धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक हैं। यह पाया गया कि ऊपरी असम के जिलों में रहने वाले देशी असमिया बोलने वाले लोगों में से 80-90% लोगों को सूची में शामिल किया था, जबकि निचले असम और मध्य असम जिलों के संबंध में प्रतिशत केवल 35 से 40% था। बराक घाटी की स्थिति बदतर है, जिसमें ज्यादातर बंगाली भाषी निवास करते हैं। बेहद खराब है। विधायकों, सांसदों, पूर्व विधायकों और पूर्व सांसदों, सरकारी कर्मचारियों, यहां तक कि धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक समुदायों से संबंधित सशस्त्र बलों में सेवा करने वाले कई प्रमुख व्यक्तियों के भी नाम छोड़ दिए गए हैं।

पहली सूची प्रकाशित करने से पहले, एनआरसी प्राधिकरण ने बार-बार मीडिया प्रचार के सभी रूपों के माध्यम से आश्वासन दिया था कि सभी वास्तविक भारतीय नागरिकों के नाम अंतिम एनआरसी में शामिल किए जाएंगे और उन्हें चिंतित नहीं होना चाहिए। दूसरी तरफ, पहले ड्राफ्ट के प्रकाशित होने पर असम के संवेदनशील और सुरक्षा की दृष्टि से कमजोर जिलों में बड़े पैमाने पर गड़बड़ी की प्रत्याशा के बाद केंद्र सरकार की मंजूरी से राज्य सरकार ने नियमित पुलिस बल के अलावा, पैरा-सैन्य बलों की 85 कंपनियां तैनात की हैं। एक ऐसे समय जब लाखों लोग अपनी नागरिकता की स्थिति के बारे में चिंतित हैं, राज्य के बीजेपी के मुख्यमंत्री, श्री सरबानंद सोनोवाल ने एक बैठक में ऐलान किया कि जिन लोगों के नाम एनआरसी में नहीं होंगे उन्हें विदेशी घोषित किया जाएगा और वे किसी भी मतदान या नागरिक अधिकार का आनंद नहीं लेंगे; वे केवल भोजन, आश्रय और काम के हकदार होंगे। जाहिर है, उद्देश्य उन अंधराष्ट्रवादी ताकतों को प्रसन्न करना है जो लंबे समय से धार्मिक भाषाई लाइन के साथ असम के मेहनतकश लोगों को बांटने और इस तरह निर्दयी दमनकारी पूंजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न जीवन की ज्वलंत समस्याओं पर उनके वांछित एकजुट आंदोलन को कमजोर कर देने के मिशन में लगी हुई हैं।

केवल असम में ही एनआरसी का उन्नयन क्यों?

लेकिन, शुरुआत में जिस प्रश्न को स्पष्ट करने की जरूरत है वह यह है कि एनआरसी क्या है और अधिकारियों को विशेष रूप से केवल असम के लिए ही इसे तैयार करने का काम करने के लिए क्यों प्रेरित किया। 1955 के नागरिकता अधिनियम की धारा 18 नियम 4 में नागरिकता का राष्ट्रीय रजिस्टर या एनआरसी तैयार करने का प्रावधान है। प्रावधान यह है कि जनगणना के मामले में सभी सच्चे भारतीय नागरिकों के नामों को सूचीबद्ध करने के लिए घर-घर जाकर गणना की जानी चाहिए। लेकिन अब तक, 1951 में असम के संबंध में एनआरसी तैयार करने का मामला छोड़कर, भारत के अन्य किसी भी राज्य के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एनआरसी तैयार नहीं किया गया है। लेकिन फिर लाखों लाख विदेशियों का पता लगने के बहाने जिन्हें असम में घुसपैठिए कहा गया जो पहले भी और उसके बाद भी राज्य में रह रहे हैं, नियम 4 में संशोधन किया गया और संसद को दरकिनार कर एक कार्यकारी निर्णय के माध्यम से नियम 4ए इसमें घुसेड़ दिया गया। संविधान के अनुसार, इस तरह के संशोधन संसद द्वारा प्रस्तुत किए जाने कानूनी तौर पर लाजिमी होते हैं। संवैधानिक जनादेश के इस जानबूझकर विचलन निश्चित रूप से निश्चित कुटिल इरादे और परोक्ष लांछन से भरा था। इसके अलावा, सभी के आश्चर्य की बात यह है कि निर्देश यह था कि असम के लोगों को एनआरसी में अपने नाम शामिल करने के लिए अधिकारियों के पास खुद जाकर अपने नाम जुड़वाने होंगे, जबकि आम दस्तूर है घर-घर जाकर किए गए सर्वेक्षण और निरीक्षण के आधार पर ऐसे नामों को दर्ज करना। इसके अलावा, यह अनिवार्य कर दिया गया था कि असम के लिए एनआरसी दो मुख्य दस्तावेजों के आधार पर, अर्थात्, 1951 का एनआरसी और 25 मार्च, 1971 से पहले की किसी निर्वाचन सूची के आधार पर तैयार किया जाएगा। ये दोनों दस्तावेज राज्य के सभी जिलों में उपलब्ध नहीं हैं। 1951 के एनआरसी में जिन लोगों के नाम शामिल किए गए थे, इस दौरान उनमें से ज्यादातर लोगों की मृत्यु हो गई है। फिर, वर्तमान नागरिकों के रिश्ते को अपने मृत पूर्वजों के साथ कैसे साबित करना था? गौरतलब है कि हमारी पार्टी ने एनआरसी की तैयारी के शुरुआती चरण में ऐसी कठिनाइयों और असंभावनाओं के प्रति अधिकारियों का स्पष्ट रूप से ध्यान आकर्षित किया था। लेकिन, किसी को भी हमारे सुझावों पर ध्यान देने की परवाह नहीं थी। यह स्पष्ट था कि तत्कालीन केंद्रीय और राज्य सरकारों दोनों की मंशा एक तर्कसंगत कवायद करने की कतई नहीं थी, बल्कि वे सभी ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (आसू) और अन्य ऐसी अंधराष्ट्रवादी ताकतों को खुश करने और संतुष्ट करने में रुचि रखती थी, भले ही इसका मतलब केवल देश में ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में भी कभी देखे-सुने नहीं गए ऐसे बेतुके प्रस्ताव और तरीके का समर्थन करना था।

इतिहास की जरा खोजबीन करना

इस मुद्दे के तमाम पहलुओं को समझने में मदद के लिए, इतिहास का जरा पता लगाना जरूरी माना जाता है। ग्वालपाड़ा का अविभाजित जिला ब्रिटिश शासन के दौरान ऐतिहासिक रूप से अविभाजित बंगाल का हिस्सा रहा था। वर्तमान काटछांट कर बनाए गए धुबरी, ग्वालपाड़ा, कोकरराज, बोंगाईगांव, बक्ष जिले और कुछ अन्य आस-पास के क्षेत्रों को लेकर तब यह जिला था। यह केवल 1912 में था कि सिल्हत जिले के साथ ग्वालपाड़ा के अविभाजित जिले को असम में शामिल किया गया था और शिलांग में मुख्यालय वाले एक मुख्य आयुक्त के प्रशासनिक नियंत्रण में रखा गया था। इस अवधि के दौरान, तत्कालीन अविभाजित बंगाल के पूर्वी हिस्से से मुस्लिम समुदाय से संबंधित गरीब भूमिहीन किसान एक पड़ोसी जिले से दूसरे जिले में प्रवासी होकर चले गए थे जो किसी दूसरे प्रशासनिक सेट-अप के अधिकार क्षेत्र में था या यहां तक कि तत्कालीन ब्रिटिश भारत में देश के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में भी चले गए थे। कड़ाई से कहें, तो इन अंतर-जिला या अंतरराज्यीय आवागमन या एक ही देश के लोगों की गतिविधियों को 'माइग्रेशन' (आप्रवासन) नहीं कहा जा सकता है। 'माइग्रेशन' शब्द का अर्थ है 'स्थायी रूप से रहने के इरादे से एक देश से दूसरे देश में लोगों का आवागमन' होता है। माइग्रेशन के रूप में उसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर ऐसी बदलावों और आवागमनों को वर्गीकृत करना कितना त्रुटिपूर्ण है।

दूसरे जिस तथ्य पर संज्ञान लेने की जरूरत है वह यह है कि अविभाजित ग्वालपाड़ा जिले के जमींदारों (भूस्वामियों) ने मुस्लिम समुदाय के परिश्रमी किसानों को उनके स्वामित्व वाली गैर-कृषित भूमि पर आने और बसने के लिए प्रोत्साहित किया था। इन जमींदारों ने इन गरीब लोगों को बसने के लिए भौतिक सहायता भी बढ़ा दी। वैसा क्यों था? क्योंकि, मुस्लिम समुदाय से जुड़े इन गरीब बंगाली बोलने वाले लोगों को माहिर काश्तकार माना जाता था और यहां तक कि नदी द्वीपों (चहार क्षेत्रों) को अत्यधिक उपजाऊ मिट्टी में बदलने में सक्षम थे। इसलिए, उस समय आम असमिया भाषा भाषी लोगों ने भाईचारे और एकजुटता की भावना के साथ उनका तहेदिल से स्वागत किया था। यही कारण है कि असम के इस हिस्से में बंगाली भाषाभाषी मुस्लिम आबादी की बड़ी संख्या पायी जाती है जो ज्यादातर खेतीबाड़ी में लगी हुई है। यह बात असम के निचले जिलों में बंगाली भाषा की प्रधानता की घटना को भी समझाती है। इस अवधि के दौरान असम में सिल्हत जिला भी लगाया गया था। लेकिन बाद में देश के विभाजन के दौरान सिल्हत पूर्वी पाकिस्तान में चला गया। इसके बाद, इस अवधि के दौरान हिंदू आबादी के एक बड़े हिस्से ने सिल्हत छोड़ दिया और पड़ोसी असम में स्थानांतरित हो गया। अब, असम में अंधराष्ट्रवादी आंदोलन के पैरोकार इस बंगाली भाषी आबादी पर, जो 20 से 70 लाख के बीच बैठती है, 'विदेशी बांग्लादेशीं' होने का ठप्पा लगा रहे हैं और उनके निर्वासन की मांग कर रहे हैं। अजीब शर्तों के आधार पर एक विशेष कवायद के जरिए असम के लिए एनआरसी तैयार करने का उपक्रम है।

असम, जैसा कि सभी को मालूम है, भौगोलिक दृष्टि से और सांस्कृतिक रूप से पूरे पूर्वोत्तर में एक अद्वितीय स्थिति रखता है। आजादी के बाद, लोगों के विभिन्न समुदायों के बीच एकीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई थी। लेकिन, आक्रामक अंधराष्ट्रवादी ताकतों में वृद्धि और अन्य छोटे समुदायों के लोगों पर असमिया भाषा और संस्कृति के जबरन थोपे जाने के कारण बाद में विद्रोह हुआ और बृहतर असम से टूट कर अलग हो जाने का फैसला किया। इसके एक अनुक्रम के रूप में, नागालैंड, मिजोरम और मेघालय के अलग-अलग राज्यों को असम से काटछांट कर बनाया गया था। इतना ही नहीं, असमिया भाषा और संस्कृति की स्वीकृति पर अत्यधिक जोर देने के परिणामस्वरूप, असम की कुछ छोटी जनजातियों और समुदायों जिन्होंने पहले खुद को असमिया के रूप में एकात्म कर दिया था, अब खुद को असमिया कहलाने और अलग पहचान मांगने से इंकार कर रहे हैं। इस संदर्भ में इसका उल्लेख किया जा सकता है कि जब असम सरकार ने 1961 में मुख्य रूप से बंगाली भाषी क्षेत्र बराक घाटी में असमिया भाषा को जबरन लागू करने की कोशिश की, तो पूरी घाटी में एक जोरदार विरोध प्रदर्शन हुआ था। पुलिस ने सिलचर रेलवे स्टेशन पर प्रदर्शनकारियों पर गोलीबारी कर दी थी जिसमें 11 लोगों ने अपनी जान गंवा दी थी। आखिरकार, असम सरकार को आदेश वापस लेना पड़ा था और बंगाली को घाटी क्षेत्र की आधिकारिक भाषा के रूप में बरकरार रखा था।

असम में सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति की पृष्ठभूमि

असम को लघु भारत कहा जाता है। इस दृष्टिकोण से, राज्य की सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक-सांस्कृतिक स्थिति देश के बाकी हिस्सों से बहुत अलग नहीं है। आइए संक्षेप में पूरे देश की पृष्ठभूमि पर नजर डालें।

यह एक विडंबना है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम एक ऐसे समय में उभर कर आया जब विश्व पूंजीवाद पहले ही मरणासन्न और प्रतिक्रियावादी हो गया था। यही कारण है कि भारतीय राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग ने, जब स्वतंत्रता संग्राम के भंवर में था, अपने स्वयं के एजेंडे और उद्देश्य के बावजूद, धार्मिक विचारों और मध्ययुगीन सामंती फूटपरस्त सोच-विचारों से समझौता कर लिया था। इसलिए, समाज के जनवादीकरण का अनिवार्य कार्य अपूर्ण रह गया और इसलिए हिंदू-मुस्लिम भावना, ऊंची जाति-नीची जाति की भावना, असमिया-बंगाली होने की भावना, आदिवासी-गैर-जनजातीय भावना आदि के रूप में भारतीय समाज में धर्म, जाति, भाषा, नृवंशीयता, क्षेत्रवाद पर केंद्रित विभिन्न विभाजन जारी रहे। एसयूसीआई (सी) के संस्थापक महासचिव और युग के सबसे प्रमुख मार्क्सवादी विचारकों में से एक कॉमरेड शिवदास घोष ने स्पष्ट भाषा में कहा था : "हालांकि राजनीतिक रूप से भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया, परन्तु सांस्कृतिक रूप से यह विभाजित रहा।" यहां यह गौरतलब है कि अगर आजादी के लिए उच्च नैतिकता और संस्कृति के आधार पर एक मजबूत और एकजुट आंदोलन हुआ होता, तो शायद भारत कृत्रिम रूप से विभाजित नहीं होता। इतना ही नहीं; आजादी के बाद भी, भारतीय पूंजीपति वर्ग जो सत्ता में आ बैठा था, उसने समाज से फूटपरस्त ताकतों और सोच-विचारों को कमजोर करने और उखाड़ फेंकने का कोई प्रयास नहीं किया। इसके बजाय, यह अपने खुद के संकीर्ण तबकाती हित में सांप्रदायिकता, जातिवाद, नृवंशवाद, क्षेत्रीयतावाद, अंधराष्ट्रवाद और ऐसे अन्य हानिकारक फूटपरस्त सोच-विचारों के सभी रूपों को उकसावा और बढ़ावा देता चला गया। इसके अलावा, वह मुसलमानों के खिलाफ हिंदुओं को भिड़ा कर, बंगाली भाषी लोगों के खिलाफ असमिया भाषी लोगों को लड़ा कर, बिहारियों के खिलाफ महाराष्ट्रियों को और तथाकथित नीची जाति के लोगों या दलितों के खिलाफ ऊंची जाति वाले लोगों को खड़े करके उन्हें भ्रातृघाती दंगे-फसादों और संघर्षों में मेहनतकश लोगों को उलझाने का एक कुटिल उद्देश्य लेकर चलता रहा और अभी भी इसी राह पर चल रहा है। शोषित-पीड़ित लोगों में जितनी अधिक फूट पड़ी रहेगी, सत्तारूढ़ पूंजीपति वर्ग उतना ही अधिक आश्वस्त होगा प्रतिरोध के बिना अपने क्रूरतापूर्ण दमनकारी शासन को लंबे समय तक आगे बरकरार रखने में। यहां उल्लेख करना उचित है कि सीपीआई, सीपीआई(एम) और आरसीपीआई जैसी पार्टियां जो खुद को वामपंथियों कहलाती हैं और असम में जनता पर एक समय कुछ प्रभाव रखती थी, न सिर्फ उभरती अंधराष्ट्रवादी ताकतों के बढ़ते खतरे को समझने में नाकाम रही, बल्कि वे स्वयं इनकी शिकार हो गई और यहां तक कि इन्होंने अपना चुनावी लाभ बटोरने के लिए इन ताकतों के साथ भी गठबंधन किया।

भारत के बाकी हिस्सों से कोई अलग नहीं है असम की आर्थिक-राजनीतिक स्थिति

बढ़ती गरीबी और बदहाली, बढ़ती बेरोजगारी की समस्या, मूल्य वृद्धि, शिक्षा की कमी और स्वास्थ्य देखभाल, किसानों की परिस्थिति, औद्योगिकीकरण की कमी, उद्योगों का बंद होना, रोजगारहानि में बढ़ोतरी, बढ़ता भ्रष्टाचार और बढ़ती सांस्कृतिक गिरावट जो पूंजीवादी भारत को परेशान कर रही है, इनसे असम भी अछूता नहीं बचा है। कच्चे माल और सस्ते श्रमशक्ति की आसान उपलब्धता के बावजूद, आजादी के बाद पिछले 70 वर्षों के दौरान असम में तीन तेल रिफाइनरियों को छोड़कर कोई बड़ा उद्योग स्थापित नहीं किया गया था। जन आंदोलन के परिणामस्वरूप जोगिगोपा, जगिरोड और पंचग्राम में तीन पेपर मिलें लगाई गई थी। लेकिन, अब तीनों के शटर गिर गए हैं। यहां तक कि ब्रिटिश काल के दौरान धुबरी में स्थापित एकमात्र माचिस-कारखाना भी बंद कर दिया गया है। इसी तरह, ब्रिटिश समय के दौरान स्थापित चाय बागान बंद हो रहे हैं और श्रमिकों को नौकरियों से बाहर फेंक दिया गया है। आजादी से पहले और देश की आजादी के तुरंत बाद, असम के लोगों के जीवन स्तर का मानक कुछ अन्य राज्यों

(शेष पृष्ठ 6 पर)

उच्च शिक्षा आयोग अधिनियम 2018 पर प्रतिक्रिया

केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा हाल ही में एक नया कदम उठाया गया है जिसमें यूजीसी अधिनियम 1956 को निरस्त करके उसकी जगह भारत के उच्च शिक्षा आयोग (एचईसीआई) अधिनियम 2018 लाने का प्रयास किया गया है। यूजीसी नए विश्वविद्यालयों को मान्यता देने, अकादमिक और शोध केन्द्रों का स्तर बनाए रखने और उच्च शिक्षा के संस्थानों के लिए आवश्यक धन प्रदान करने के घोषित उद्देश्य के साथ वर्ष 1956 में गठित किया गया। एक संसदीय अधिनियम के तहत यूजीसी का गठन एक स्वायत्त निकाय के रूप में किया गया था ताकि वह स्वतंत्रता के साथ अपना कर्तव्य निर्वहन कर सके, हालांकि सत्तारूढ़ शक्तियों के बार-बार हस्तक्षेप के कारण, इसकी स्थापनाकाल से ही इसे सीट कटौती करने, शिक्षा का निजीकरण और शिक्षा का व्यावसायीकरण करने के अपने उद्देश्य की पूर्ति करने के औजार के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा है। इसे शासकों के अधीन बना दिया गया है। यह प्रक्रिया और भी अधिक स्पष्ट हो गई जब यूजीसी ने केंद्र में बीजेपी शासन के दो चरणों के दौरान विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम के भगवाकरण शुरू करने की सिफारिश की। यूजीसी की कमी-खामियों को दूर करने की कोशिश करना एक बात है, लेकिन इसे पूरी तरह से समाप्त कर देने का प्रस्ताव एकदम अलग बात है। क्या यह किसी मरीज को इलाज के बिना मार देने के बराबर नहीं है? यदि हम प्रस्तावित आयोग को दिए गए गठन और शक्तियों के तरीके को देखते हैं तो सवाल और भी प्रासंगिक हो जाता है। सबसे पहले, आश्चर्य की बात है, (i) राज्यसभा सचिव ने मानव संसाधन विकास पर संसदीय स्थायी समिति की ओर से 10 जून को अग्रणी दैनिक समाचार पत्रों में एक बयान दिया था, जिसमें 'यूजीसी के कार्य करने से संबंधित मुद्दे' और (ii) सुझाव 25 जून 2018 तक स्थायी समिति तक पहुंचने वाले थे। फिर 27 जून को एमएचआरडी एचईसीआई के गठन करने और यूजीसी अधिनियम 1956 को रद्द करने के लिए एक ड्राफ्ट अधिनियम कैसे तैयार और प्रस्तावित कर सकता था? क्या ड्राफ्ट अधिनियम बनाने से पहले सरकार ने स्थायी समिति की राय का इंतजार किया? ऐसा नहीं लगता है। इसके बजाय, यह स्पष्ट है कि स्थायी समिति के सुझाव मांगना केवल एक चाल थी और यूजीसी को भंग करने का निर्णय केंद्र सरकार द्वारा बहुत पहले ले लिया गया था। यह ड्राफ्ट एक्ट में तय किया गया है कि इसके अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य बारह सदस्यों को केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा और अध्यक्ष का चयन कैबिनेट सचिव द्वारा किया जाएगा। इसके अलावा, उच्च शिक्षा सचिव और 3 शिक्षाविदों को सदस्यों के रूप में लिया जाएगा। इसका मतलब है कि एचईसीआई पूरी तरह से सरकारी नौकरशाही के तहत नियंत्रित होगी—यूजीसी की न्यूनतम सापेक्ष स्वतंत्रता को भी खत्म कर देगा और इसमें शामिल शिक्षाविदों की भूमिका को भी बेहद सीमित कर देगा। इसलिए, वर्तमान में सरकार के प्रचलित रंग ढंग देखकर आसानी से यह अंदेशा जाहिर किया जा सकता है कि जिस प्रकार से निर्धारित तरीके से प्रस्तावित आयोग का गठन किया जा रहा है, यह केवल शिक्षा और शैक्षणिक संस्थानों और उनके शिक्षकों-छात्रों-कर्मचारियों की स्वायत्तता को और भी अधिक प्रतिबंधित करने का सबब बन जाएगा।

इसके अलावा, एचईसीआई अधिनियम का प्रारूप कॉलेजों और विश्वविद्यालयों को धन प्रदान करने के प्रावधान को भी खत्म कर देता है—यह अधिकार पहले यूजीसी को प्राप्त था, जो अब केवल केंद्र सरकार के पास ही रहेगा। दूसरी तरफ ड्राफ्ट एक्ट केन्द्र सरकार को किसी भी विश्वविद्यालय को उसके निम्न स्तर का होने का बहाना बना कर बंद करने की बेलगाम शक्ति प्रदान करता है। यह सरकार को एचईसीआई के किसी भी सदस्य, यहां तक कि अपने अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को भी हटाने की शक्ति प्रदान करता है। यह प्रावधान यूजीसी अधिनियम में शामिल नहीं था। तो संक्षेप में, ड्राफ्ट एक्ट (क) शैक्षणिक संस्थानों पर अधिक सरकारी नियंत्रण कायम करने के लिए, (ख) अकादमिक स्वायत्तता को खत्म करने के लिए, (ग) शिक्षा के खुलेआम व्यावसायीकरण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए बनाया गया है। असल में यह अंततः शिक्षा में पूंजीनिवेश करने वाले निजी निवेशकों को फायदा पहुंचाएगा। इसके अलावा, मसौदे में एक प्रावधान यह भी दिया गया है कि केंद्र सरकार और एचईसीआई के बीच अगर असहमति होती है, तो उस मामले में केंद्र सरकार का निर्णय अंतिम होगा। जाहिर है, यह सत्ता के पूर्ण केंद्रीकरण की ओर कदम है और एचईसीआई को सरकारी शैक्षिक नीतियों को लागू करने के लिए एक साधन के रूप में कार्य करने के लिए बनाया जाएगा, जो वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षा के वास्तविक अर्थों को मुश्किल से ही कायम रख रहा है।

इस पृष्ठभूमि में हम केंद्र सरकार से अपील करते हैं कि ड्राफ्ट एचईसीआई अधिनियम को फौरन खारिज करे और शिक्षकों और छात्रों के संगठनों, शिक्षाविदों और अन्य जिम्मेदार व्यक्तियों की राय और सुझाव लेकर एक निरंतर और उत्तरदायी प्रक्रिया के माध्यम से ऐसा माहौल तैयार करने की जरूरत है जिससे कि यूजीसी सामाजिक रूप से दबे-कुचले और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों सहित सभी के लिए धर्मनिरपेक्ष, वैज्ञानिक और जनवादी शिक्षा का प्रसार करने की जिम्मेदारी ले सके।

(प्रभास घोष) महासचिव, केंद्रीय कमेटी, एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) 10 जुलाई, 2018

9 वर्षीय बच्ची से गैंगरेप व हत्या के खिलाफ मुख्यमंत्री का पुतला दहन

पटना (बिहार) : मुजफ्फरपुर के सरैया के पहाड़पुर गांव में 9 वर्षीय बच्ची के साथ गैंगरेप और हत्या के जघन्य कांड के खिलाफ 25 जुलाई को ऑल इण्डिया डीएसओ, ऑल इण्डिया डीवाईओ और ऑल इंडिया महिला सांस्कृतिक संगठन के तत्वावधान में छात्र, युवाओं तथा महिलाओं ने विरोध मार्च निकालकर मुख्यमंत्री का पुतला दहन किया। विरोध मार्च में शामिल लोग 'सरैया गैंगरेप के दोषियों को दृष्टांतमूलक सजा दो', 'सरैया गैंगरेप के दोषियों को अविलम्ब गिरफ्तार कर स्पीडी ट्रायल चलाओ', 'बच्चियों व महिलाओं के साथ बढ़ते रेप-गैंगरेप पर रोक लगाओ' आदि नारे लगा रहे थे। गांधी मैदान स्थित नेताजी सुभाषचन्द्र बोस मूर्ति से शुरू हुआ छात्र, युवाओं व महिलाओं का विरोध मार्च भगत सिंह चौक पर जाकर सभा में तब्दील हो गया, जहां मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का पुतला दहन किया गया।

हाल में राज्य में महिलाओं और बच्चियों के साथ दुष्कर्म की घटनाओं में हुए इजाफा पर चिंता जताते हुए छात्र, युवा व महिला नेताओं ने महिलाओं और बच्चियों से हो रहे रेप-गैंगरेप की घटनाओं पर अविलम्ब रोक लगाने की मांग की। सभा को एआईडीवाईओ के कॉ. अनिल कुमार चांद, एआईडीएसओ के कॉ. निकोलाई शर्मा तथा एआईएमएसएस की कॉ. अनामिका ने संबोधित किया।

बढ़ती भयंकर बेरोजगारी के खिलाफ
म.प्र. प्रथम राज्य स्तरीय युवा सम्मेलन सम्पन्न

भोपाल : युवा सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कॉ. प्रतिभा नायक

भोपाल (म.प्र.) : बेरोजगारी, ठेकेदारी प्रथा के खिलाफ व स्थायी रोजगार की मांग को लेकर ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक यूथ ऑर्गेनाइजेशन (एआईडीवाईओ) का प्रथम राज्य सम्मेलन 1 जुलाई को आयोजित किया गया जिसमें मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों से बड़ी संख्या में युवा शामिल हुए। सम्मेलन में सुसज्जित प्रदर्शनी लगाई जिसका उद्घाटन साहित्यकार श्री सुरेंद्र रघुवंशी के द्वारा व कार्टून-न्यूज कटिंग प्रदर्शनी का उद्घाटन वरिष्ठ पत्रकार श्री मोहनलाल मोदी के हाथों से हुआ।

सम्मेलन का खुला अधिवेशन स्थानीय नीलम पार्क में आयोजित हुआ। सम्मेलन की शुरुआत जनवादी गीत 'जागा रे जागा रे जागा सारा संसार' से शुरुआत हुई।

सम्मेलन की मुख्य वक्ता एआईडीवाईओ की राष्ट्रीय महासचिव कॉमरेड प्रतिभा नायक ने खुले अधिवेशन को सम्बोधित करते हुए कहा कि बेरोजगारी के हालात आज बहुत भयावह हो गए हैं। देशभर में सभी सरकारी विभागों में लाखों-लाख पद खाली पड़े हैं लेकिन कोई भर्ती प्रक्रिया नहीं शुरू की जा रही है, उल्टे हाल ही में केन्द्र सरकार ने केंद्रीय विभागों के 5 लाख पदों को समाप्त कर दिया है। जबकि लाखों-करोड़ों नौजवान नए रोजगार पाने की आस लगाए हुए हैं। मोदी सरकार ने प्रतिवर्ष 2 करोड़ नौकरियां देने का वायदा किया था। अन्ततः यह भी एक राजनीतिक जुमला निकला। उन्होंने युवाओं से बेरोजगारी के खिलाफ दीर्घस्थाई युवा आंदोलन खड़ा करने का आह्वान किया।

सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए मेहनतकश वर्ग की पार्टी एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) के राज्यसचिव कॉमरेड प्रताप सामल ने कहा कि मंदसौर में 7 साल की बच्ची के साथ हुई शर्मसार करने वाली घटना की हम कड़ी निंदा करते हैं और दुष्कर्म के आरोपी को जल्द से जल्द फांसी की सजा दी जाये ये मांग करते हैं। उन्होंने आगे कहा कि महिलाओं और बच्चियों पर बढ़ रहे अपराध में मध्यप्रदेश नम्बर 1 पर है जिसका प्रमुख कारण प्रदेशभर में शराब, नशाखोरी और अश्लीलता का माहौल जिम्मेदार है। उन्होंने राज्य सरकार से मांग की कि प्रदेश में अविलंब पूर्ण शराबबन्दी लागू की जाये।

एआईडीवाईओ द्वारा चलाये जा रहे बेरोजगारी के खिलाफ आंदोलन को उन्होंने अपना समर्थन दिया।

खुले अधिवेशन में एआईडीवाईओ के राष्ट्रीय अध्यक्ष कॉ. रामनजनप्पा मंच पर उपस्थित थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता एआईडीवाईओ के राज्य संयोजक कॉ. लोकेश शर्मा ने की। उन्होंने कहा कि ये सम्मेलन मांग करता है कि समस्त खाली पड़े सरकारी पदों को जल्द भरा जाये, ठेकेदारी, संविदा प्रथा को खत्म कर स्थाई रोजगार दिया जाये। रोजगार के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया जाये। रोजगार न मिलने तक बेरोजगार युवाओं को बेरोजगारी भत्ता दिया जाये। मध्यप्रदेश में शराब बंदी पूर्ण रूप से लागू हो।

सम्मेलन में गुना, ग्वालियर, अशोकनगर, इंदौर, शिवपुरी, शाजापुर,उज्जैन, धार, विदिशा, रायसेन, भोपाल आदि प्रदेश के कई जिलों के युवा प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। सम्मेलन के दूसरे दिन 2जुलाई को प्रतिनिधि अधिवेशन स्थानीय राधा-स्वामी सत्संग धर्मशाला में आयोजित किया गया। इसमे म.प्र. के कुल 12 जिलों से 110 प्रतिनिधि शामिल हुए।

अधिवेशन का संचालन करने के लिए कॉमरेड्स सिद्धान्त साहू, प्रतिज्ञा मांझी, वीणा, सीमा शर्मा व अवनीश कुमार को लेकर अध्यक्षमंडल बनाया गया। उद्घाटन सत्र में एआईडीवाईओ के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष कॉ. जुबैर रब्बानी ने अपना वक्तव्य पेश किया। प्रतिनिधि अधिवेशन में मुख्य वक्तव्य एआईडीवाईओ के राष्ट्रीय अध्यक्ष कॉ. रामनजनप्पा ने रखा। उन्होंने कहा कि मध्यप्रदेश एक बड़ा राज्य है। देश-प्रदेश में युवाओं के मन मेंसाम्प्रदयिक-इलाकापरस्त -जातिवादी ताकतें जातपात और साम्प्रदायिकता का जहर घोल रही हैं। ऐसी संकट की घड़ी में सर्वहारा वर्ग के महान नेता कॉ. शिवदास घोष के विचारों से लैस लड़ाकू युवा संगठन एआईडीवाईओ को मजबूत करना एआईडीवाईओ के कार्यकर्ताओं का अहम फर्ज है।

सम्मेलन में मुख्य प्रस्ताव कॉ. प्रमोद नामदेव द्वारा रखा गया जिसका समर्थन कॉ. लोकेश शर्मा ने किया। कॉ. प्रतिज्ञा मांझी ने सांगठिनक रिपोर्ट रखी। प्रतिनिधि अधिवेशन की पूर्व संध्या पर आयोजित काव्यगोष्ठी में मशहूर शायर जाहिद कुरेशी साहब ने शिरकत की। इसके अलावा मैजिक शो, मिमिक्री शो, गीत-गजल व 'आवयश्कता है' नाटक का मंचन किया गया।

सम्मेलन के अंत में एक मजबूत नवनिर्वाचित राज्य कमिटी की घोषणा की गई। इसमें राज्य अध्यक्ष कॉ. लोकेश शर्मा और राज्यसचिव कॉ. प्रमोद नामदेव चुने गए। इसके अलावा राज्य कमिटी उपाध्यक्ष कॉमरेड्स प्रतिज्ञा मांझी, सिद्धान्त साहू, भूरेलाल, विजय शर्मा, विजय कुशवाह, राज्य सचिवमण्डल में कॉमरेड्स पारुल शर्मा, राजेश पटेल, नीहार सोनी, नीरज बैरागी, मनोज रजक, सावन बैरागी, कोषाध्यक्ष कॉ. धीरेंद्र शिवहरे व राज्य कार्यालय सचिव कॉ. अवनीश श्रीवास्तव चुने गए।

15 सदस्यीय राज्यकारिणी व 32 सदस्यीय राज्य कॉउन्सिल चुनी गई। सम्मेलन के अंत में कॉमरेड शिवदास घोष पर रचित गीत गाकर सम्मेलन की समाप्ति की घोषणा हुई। राज्य सम्मेलन के संदेश को प्रदेश के कोने कोने में ले जाने का आह्वान किया गया।

बलात्कार की बढ़ती घटनाओं पर महिलाओं ने जताया रोष

मुरादाबाद (उ.प्र.) : महिलाओं व बच्चियों पर बढ़ते दुष्कर्मों पर रोष प्रकट करते हुए ऑल इण्डिया महिला सांस्कृतिक संगठन की कार्यकर्त्रियों ने 7 जुलाई को कंपनी बाग स्थित गांधी मूर्ति के सामने प्रदर्शन किया।

मंदसौर की घटना पर अफसोस जाहिर करते हुए वक्ताओं ने कहा कि समाज में इस तरह की घटनाएं होने से लोग खौफ में हैं।

प्रदर्शन में भावना सिंह, रामेश्वरी, माया राजपूत, पुष्पा, सुमन, नाजमीन, फारेहा, कमलेश चाहल, लिपि, किरण, कुलवंत आदि शामिल रहीं।

पटना में शिक्षा बचाओ मार्च

पहली कक्षा से पास-फेल प्रणाली पुनः लागू करने की मांग पर 26 जुलाई को यहां ऑल इंडिया सेव एजुकेशन कमिटी के तत्वावधान में छात्रों, शिक्षकों व शिक्षाप्रेमियों का मार्च निकाला गया। मार्च गांधी मैदान स्थित जे.पी. गोलम्बर से निकला और लगातार हो रही बारिश के बीच शहीद भगत सिंह चौक तक गया। मार्च में शामिल छात्र, शिक्षक तथा शिक्षाप्रेमी हाथों में तख्तियां लिये हुए 'पहली कक्षा से पास-फेल प्रणाली पुनः लागू करो', 'छात्रों के भविष्य के साथ खिलवाड़ बंद करो' 'बेरोकटोक पास करने की नीति वापस लो' आदि नारे लगा रहे थे।

जुलूस के बाद हुई सभा को संबोधित करते हुए वक्ताओं ने कहा कि पास-फेल प्रणाली के न रहने की वजह से सरकारी सहायताप्राप्त स्कूलों के छात्र-छात्राओं की शिक्षा की बुनियाद को भारी नुकसान पहुंचा है। शिक्षा के स्तर में काफी गिरावट आयी है। नतीजतन अभिभावक अपनी दयनीय आर्थिक स्थिति के बावजूद अपने बच्चों को महंगे निजी स्कूलों में भेजने को मजबूर हो रहे हैं। इस तरह केन्द्र और राज्य सरकार बच्चों के भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रही है। स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छोड़ने वालों (ड्रॉप-आउट्स) की संख्या खतरनाक रूप से बढ़ी है। आठवीं कक्षा तक छात्रों को बेरोकटोक पास करने के 'शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009' के

पटना : शिक्षा बचाओ मार्च करते हुए छात्र, शिक्षक व शिक्षाप्रेमी लोग

विनाशकारी प्रावधान से अब तक काफी नुकसान हो चुका है। छात्रों, शिक्षकों व अभिभावकों के लगातार आंदोलन की वजह से सरकार ने अधिनियम में हाल ही में संशोधन किया है, जिसके तहत 5वीं और 8वीं कक्षा में परीक्षा लेने की बात तो कही गयी है, पर पहली से चौथी तथा छठी और सातवीं कक्षा के छात्रों के मामले में बेरोकटोक पास करने की नीति ही लागू रहेगी। वक्ताओं ने उक्त संशोधन को मजाक बताते हुए कहा कि इससे ड्रॉप-आउट्स की बढ़ती रफ्तार में कोई अंतर नहीं आयेगा। वक्ताओं ने अगले शिक्षा वर्ष से ही पहली कक्षा से पास-फेल प्रणाली पुनः लागू करने की मांग राज्य सरकार से की।

सभा को ऑल इंडिया सेव एजुकेशन कमिटी बिहार चैप्टर के संयोजक राजकुमार चौधरी, पूर्व राज्य संयोजक साधना मिश्रा, सेवानिवृत्त शिक्षक एम.के. पाठक और रवीन्द्र कुमार ने संबोधित किया।

राजनैतिक शिक्षण शिविर आयोजित

देवास : शिक्षण शिविर का संचालन करते हुए कॉ. शंकर साहा

देवास (म.प्र.) : एसयूसीआई(सी) मध्यप्रदेश की राज्य कमिटी द्वारा यहां तीन दिवसीय राज्यस्तरीय राजनैतिक शिक्षण शिविर का आयोजन 13,14,15 जुलाई को किया गया। शिविर का आरम्भ कॉमरेड् शिवदास घोष के ऊपर रचित गीत से किया गया। शिक्षण शिविर का संचालन पार्टी के केंद्रीय कमिटी सदस्य कॉमरेड शंकर साहा द्वारा किया गया। राजनैतिक शिक्षण में प्रदेश के विभिन्न जिलों भोपाल, ग्वालियर, गुना, अशोकनगर, आरोन, देवास, इंदौर, शिवपुरी, सागर, अलीराजपुर, जबलपुर, रायसेन इत्यादि जिलों से सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने हिस्सा लिया।

शिक्षण-शिविर में कार्यकर्ताओं को 2 किताबों को पढ़कर आने को कहा गया था इसमें मुख्य रूप से 'मार्क्सवाद मानवसमाज के विकास पर' और 'वैचारिक और सांगठनिक सवालों पर' गहराई से चर्चा की गई। जिसमें 2 दिनों तक विभिन्न सवालों पर कॉमरेडों ने चर्चा-बहस की व सभी कॉमरेडों ने उत्साहपूर्वक विभिन्न सवालों पर अपनी समझदारी के आधार पर सवाल व जवाब रखे। दूसरे दिन वैचारिक और सांगठनिक सवालों पर चर्चा की गई जिसमें कॉमरेडों ने भावनात्मक रूप से अपने सांगठनिक जीवन के अनुभव व क्रांतिकारी जीवन के संघर्ष, कठिनाइयां इत्यादि को खुलकर पार्टी नेतृत्व के समक्ष रखा।

आखिरी दिन कॉम.शंकर शाहा ने पार्टी कार्यकर्ताओं को संबोधित किया व कॉमरेड शिवदास घोष की क्रांतिकारी शिक्षा के आलोक में क्रांतिकारी जीवन को संचालित करने व संघर्ष लेने का आह्वान किया ताकि इस पूंजीवादी समाज व्यवस्था को बदला जा सके। शिक्षण शिविर का समापन अंतरराष्ट्रीय गीत के माध्यम से किया।

शैक्षिक समस्याओं को लेकर शिक्षा बचाओ सम्मेलन

दिल्ली : शिक्षा बचाओ सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रो. नरेन्द्र शर्मा

नई दिल्ली : 29 जुलाई को ऑल इण्डिया सेव एजुकेशन कमेटी (एआईएसईसी), दिल्ली राज्य द्वारा प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा के निजीकरण-व्यापारीकरण, हर स्तर पर फीस वृद्धि तथा बेरोक-टोक पास करने की नीति (नो डिटेन्शन पॉलिसी) के खिलाफ गांधी शांति प्रतिष्ठान (आई.टी.ओ.) में एक शिक्षा बचाओ सम्मेलन आयोजित किया गया। इस कन्वेन्शन में दिल्ली के विभिन्न इलाकों, स्कूलों तथा कॉलेजों से शिक्षक, अभिभावक व छात्र-नौजवानों ने हिस्सा लिया। कन्वेन्शन की अध्यक्षता प्रो. नरेन्द्र शर्मा (अध्यक्ष, ए.आई.एस.ई.सी., दिल्ली व रिटायर्ड प्रोफेसर, जाकिर हुसैन कॉलेज) ने की। इस कन्वेन्शन में प्रो. जानकी राजन (शिक्षा विभाग, जामिया मिलीया इस्लामिया विश्वविद्यालय), डॉ. आभा देव हबीब (मिराण्डा हाऊस, दिल्ली विश्वविद्यालय), एडवोकेट अशोक अरोड़ा (सुप्रीम कोर्ट), डॉ. सुधीर कुमार सूथर (जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय), डॉ. विनय कुमार (गणित विभाग, जाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय) व गिरवर सिंह (सचिव, ए.आई.एस.ई.सी.) ने वक्तव्य रखा।

अंत में ए.आई.एस.ई.सी. दिल्ली राज्य की नई सांगठनिक कमेटी की घोषणा हुई। कन्वेन्शन का संचालन रिटायर्ड प्रिंसिपल शारदा दीक्षित ने किया।

पहली से 8वीं कक्षा तक पास-फेल प्रथा पुनः लागू करने की मांग पर जुलूस

पटना (बिहार) : पहली कक्षा से लेकर 8वीं कक्षा तक पुनः पास-फेल प्रथा लागू करने की मांग पर अखिल भारतीय प्रतिवाद दिवस पर 13 जुलाई को एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) पटना जिला कमिटी के तत्वावधान में नेताजी सुभाष बोस की मूर्ति से भगत सिंह चौक तक प्रतिवाद मार्च किया गया और सभा की गयी।

सभा को संबोधित करते हुए एसयूसीआई (सी) के बिहार राज्य सचिवमंडल सदस्य कॉ. सूर्यकर जितेन्द्र ने कहा कि पास-फेल प्रथा खत्म कर दिए जाने से शिक्षा के स्तर में भारी गिरावट आयी है। प्राथमिक स्तर के बच्चों को जोड़, घटाव, गुणा, भाग और भाषा ज्ञान नहीं आ रहा है। जब शिक्षा की बुनियाद ही कमजोर हो जायेगी, तब उच्च शिक्षा का क्या हाल होगा। उन्होंने विनाशकारी बेरोकटोक पास करने की नीति रद्द करने और पहली से 8वीं तक पास-फेल प्रथा पुनः लागू करने की मांग की। सभा को अनामिका, अनिल कुमार चाँद, निकोलाई शर्मा, आदि साथियों ने भी संबोधित किया।

भोपाल (म.प्र.) : कक्षा एक से आठवीं तक बेरोकटोक पास करने की नीति को वापस लेने, पहली कक्षा से पुनः पास-फेल प्रणाली बहाल करने की मांग को लेकर 20 जुलाई को यहां शाहजहाँनी पार्क पर एसयूसीआई (सी) ने प्रदर्शन किया। प्रदर्शन को पार्टी की राज्य सांगठनिक कमेटी की सदस्य कॉ. जॉली सरकार, कॉ. रामावतार शर्मा और पार्टी के अशोकनगर प्रभारी व छात्र संगठन एआईडीएसओ के राज्य सचिव कॉ. सचिन जैन ने संबोधित किया। प्रदर्शन का संचालन पार्टी के भोपाल जिला कमिटी सदस्य कॉ. मुदित भटनागर ने किया।

महान साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद की जयंती मनायी

जयपुर (राजस्थान) : 31 जुलाई महान साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद की जयंती व महान क्रांतिकारी शहीद उधम सिंह के शहादत दिवस की पूर्व संध्या पर लुनियावास में एआईडीएसओ के द्वारा सभा व पुष्पांजलि कार्यक्रम आयोजित किया गया। मुख्य वक्ता एआईडीएसओ के अखिल भारतीय कमिटी के सदस्य कॉ दिनेश महंतो थे। कार्यक्रम का संचालन कॉ सौरभ सिंह ने किया। कॉ. धीरज ने गीत प्रस्तुत किया।

यूजीसी को खत्म करने के प्रस्तावित अधिनियम के खिलाफ संयुक्त छात्र प्रदर्शन

दिल्ली : सभा को संबोधित करते हुए कॉ. राहुल सरकार

नई दिल्ली : 18 जुलाई को विभिन्न एमएआरडी, नई दिल्ली में यूजीसी को खत्म करने और एचईसीआई, हेफा, हेरा, ऑटोनोमस कॉलेज, फंड कटौती, ऋण और अन्य द्वारा अनुदान को बदलने आदि विभिन्न समस्याओं पर एआईडीएसओ सहित कई वामपंथी और लोकतांत्रिक छात्र संगठनों द्वारा एक संयुक्त विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया। ।

अन्य छात्र संगठनों के वक्ताओं के अलावा एआईडीएसओ के दिल्ली उपाध्यक्ष कॉ. राहुल ने भी सभा को संबोधित किया।

महान क्रांतिकारी शहीद उधम सिंह व चन्द्रशेखर आजाद को किया याद

दिल्ली : भारत की आजादी आंदोलन के महान क्रांतिकारी व एचएसआरए के कमांडर इन चीफ चन्द्रशेखर आजाद की 112वीं जयन्ती 23 जुलाई को दिल्ली विश्वविद्यालय मेट्रो स्टेशन पर मनाई गई, जिसमें माल्यार्पण, साहित्य बिक्री व उदरण प्रदर्शनी का कार्यक्रम लिया गया।

दुर्ग (छत्तीसगढ़) : 28 जुलाई को शहीद चंद्रशेखर आजाद जयंती ग्राम कुटेला भाठा में एआईडीवाईओ और एआईएमएसएस की ओर से पूरे सम्मान के साथ मनाई गई जिसमें कॉ. विश्वजीत ने शहीद चंद्रशेखर आजाद के जीवन-संघर्ष पर अपना विचार रखे।

शहीद चंद्रशेखर आजाद नगर(भाभरा, म.प्र.) : 27 जुलाई को ऑल इंडिया महिला सांस्कृतिक संगठन द्वारा अलीराजपुर जिले के तहसील शहीद चंद्रशेखर आजाद नगर(भाभरा)में आजाद कुटिया में शहीद चंद्रशेखर आजाद जयंती मनाई गई।

गुरुग्राम (हरियाणा) : 31जुलाई को ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक यूथ ऑर्गेनाइजेशन (एआईडीवाईओ) ने स्थानीय रजत जयंती पार्क सेक्टर 4 में उधम सिंह के शहादत दिवस पर स्मृति सभा का आयोजन किया। इसमें बड़ी संख्या में लोगों ने पुष्प अर्पित कर शहीद को श्रद्धांजलि दी व सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने की शपथ ली।

संगठन के जिला अध्यक्ष कॉ. बलवान सिंह ने सभा को संबोधित किया।

निर्माण कर्मियों का प्रदर्शन

कैथल (हरियाणा) : एआईयूटीयूसी से संबद्ध भवन निर्माण कारीगर मजदूर यूनियन ने यहां डी सी, कैथल के कार्यालय पर 26 जुलाई को रोष प्रदर्शन किया और सीएम के नाम अपनी मांगों का ज्ञापन सौंपा। प्रदर्शन का नेतृत्व यूनियन के जिला प्रधान कॉ. नंदलाल ने किया।

R.N.I. No.- 43022/85
P.R.No.-DL(C)-01/1123/2018-2020
Posting at New Delhi PSO on 7–8 and 22–23 Fortnightly

असम में एनआरसी

जायज भारतीय नागरिकों को विदेशी नागरिक और घुसपैठिये कह कर परेशान किया जा रहा है

(पृष्ठ 3 का शेष)

के लोगों की तुलना में कुछ हद तक अधिक था। लेकिन आज, बेरोजगारी की समस्या और आजीविका अर्जित करने के साधनों की कमी ऐसे स्तर पर पहुंच गई है कि आम आदमी के लिए जैसे-तैसे खाली अस्तित्व बचाये रखना मुश्किल हो गया है। आजादी से पहले असम में भूमिहीन किसान बहुत दुर्लभ थे। लेकिन उनकी संख्या खतरनाक तेजी से आजकल बढ़ रही है। किसान पूंजी की कमी के कारण अपने खेतों में खेती नहीं कर पाते हैं। कृषि उत्पादन तेजी से नीचे गिरता जा रहा है। असम, जो फसल उत्पादन में एक समय अधिशेष राज्य था, अब अन्य राज्यों से धान या चावल आयात करने वाला प्रांत है। इन सभी समस्याओं की जननी यह सड़ी-गली मरणासन्न पूंजीवादी व्यवस्था है। लेकिन विभाजनकारी सोच-विचारों को फैलाने और लोगों की एकता और एकजुटता में दरार डालने के लगातार प्रयासों के निरंतर रुझान के साथ सामाजिक-राजनीतिक माहौल इतना प्रदूषित हो गया है कि वह बढ़ती गरीबी, बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि और बढ़ते भ्रष्टाचार की ज्वलंत समस्याओं को कुछ हद तक कम करने के लिए संयुक्त जनवादी आंदोलन के पूरी तरह गैर-अनुकूल हो गया है। दूसरी तरफ, लोगों के बीच बढ़ते असंतोष का फायदा उठाते हुए असम की अंधराष्ट्रवादी और इलाकापरस्त ताकतें लगातार यह प्रचार कर रही हैं कि असम के लोग केवल इसलिए दु:खी और पीड़ित हैं कि असम भारत के अन्य राज्यों और विदेशी भूमि से आने वाले लोगों की समस्या से ग्रस्त है।

अंधराष्ट्रवादी प्रचार का झूठा दावा

भले ही हम अन्य राज्यों और विदेशों से कथित प्रवाह के तथ्यात्मक पक्ष पर ही ध्यान केंद्रित करें, फिर भी अंधराष्ट्रवादी ताकतों का दावा धराशायी हो जाएगा। 1911 और 1921 की जनगणना के अनुसार, असमिया भाषी लोगों की संख्या क्रमश: 15 लाख और 17 लाख थी। यह राज्य की कुल आबादी की 50 प्रतिशत से भी कम थी। यहां तक कि 1931 की जनगणना ने दिखाया कि केवल 31.4 प्रतिशत लोग असमिया बोलने वाले थे। इस संदर्भ में, हम 1951 में असम के जनगणना संचालन के अधीक्षक श्री आरबी वाघईवाला द्वारा की गई टिप्पणी का उल्लेख करना चाहते हैं। उन्होंने कहा था, "1951 में असमिया बोलने वाले लोगों के प्रतिशत में भारी वृद्धि हुई है, यह 1931 के असमिया भाषी लोगों के प्रतिशत से ज्यादा (56.7%) है जो केवल 31.4 प्रतिशत था। असमिया भाषी लोगों के प्रतिशत में बढ़ोतरी एकमात्र अपवाद है, असम में बाकी हर एक भाषा बोलने वाले जन समूह के प्रतिशत में गिरावट दिखाई देती है। इन सभी गिरावटों ने 1951 में असमिया बोलने वाले लोगों के प्रतिशत में उछाल ला दिया है। ये आंकड़े असम में व्याप्त आक्रामक भाषाई राष्ट्रवाद और इस भाषा अपनाने की स्थिति में बहुत से मुस्लिमों एवं चाय बागानों के मजदूर प्रवासियों में असमिया को अपनी मातृभाषा के रूप में अपनाने की इच्छा को प्रतिबिंबित करने में असफल नहीं रहे हैं।"

लेकिन असमिया सोसाइटी के कुछ प्रमुख व्यक्तित्वों और बुद्धिजीवियों के उदारवादी दृष्टिकोण के बावजूद, पढ़े-लिखे व्यक्तियों और राजनेताओं के एक अन्य तबके का दृष्टिकोण और मानसिकता इस संबंध में बिल्कुल विपरीत थी। गोपीनाथ बोरडोलोई सरकार ने मई, 1946 के महीने में निचले असम के विभिन्न क्षेत्रों में मुस्लिम किसानों के खिलाफ बेरहमी से निष्कासन अभियान चलाया था। यह ऐसे गरीब किसानों को बेदखल करने की मुहिम थी जो असली भारतीय नागरिक थे। स्वतंत्रता के बाद भी यह मुहिम जारी रही और लाखों मुस्लिम किसानों को असम छोड़ने के लिए मजबूर किया गया था। आजादी के तीन साल बाद, 'इमिग्रेशन (असम से निष्कासन) अधिनियम, 1950' को बोरडोलोई सरकार द्वारा पारित और कार्यान्वित किया गया था। लाखों मुस्लिमों को निष्कासित कर दिया गया था जो असली भारतीय नागरिक थे, यह निष्कासन इस अधिनियम के दुरुपयोग और तोड़ मरोड़ से प्रेरित था। इस संबंध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि 1947 में आजादी के समय हिंदुओं और मुस्लिमों के बीच घमासान सांप्रदायिक दंगों की गिरफ्त में पूरा भारत आ गया था, लेकिन कुछ राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा विचारधारात्मक अभियान चलाये जाने के कारण असम में शांति और सद्भाव का माहौल कायम रहा था। लेकिन, मार्च 1950 के महीने में निचले असम में हिंदू-मुस्लिम दंगा फूट पड़ा था, संभवत: तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान के कुछ जिलों में हिंदुओं के उत्पीड़न के बाद एक तरह की बदला लेने की मानसिकता के कारण ऐसा हुआ था।

'इमिग्रेशन (निष्कासन) अधिनियम, 1950', "भारत में पाकिस्तानी नागरिकों की घुसपैठ की रोकथाम" वगैरह अधिनियमों के अधिनियमन से धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय के असली भारतीय नागरिकों को परेशान करने का एक हैंडल प्रदान कर दिया गया था। मामला इस हद तक खराब हो गया था कि यदि मुसलमान समुदाय से संबंधित कोई भी कहीं भी दिखाई दिया—सड़कों पर, बाजार में, रेलवे स्टेशनों पर—स्त्री हो या पुरुष, उसे पुलिस द्वारा पाकिस्तानी घुसपैठिए के शक में उत्पीड़ित किया गया। पुलिस उन्हें रात में उनके बिस्तरों से दबोच लिया करती थी और अगली सुबह जबरन निर्वासन के लिए उन्हें सीमावर्ती इलाकों में ले जाती थी।

असम आंदोलन—1979-85

इस तरह के उत्पीड़न और जबरन निर्वासन से बंगाली भाषी मुस्लिम समुदाय के लिए कोई राहत नहीं थी और अगले वर्षों में भी निर्वासन को मजबूर कर दिया गया। लेकिन, 1970 के समापन वर्षों में, कुछ घटनाओं ने इस समस्या में नए आयाम जोड़े थे। 1978 में, श्री गोलाप बारबोरा ने कांग्रेस को हराकर जनता पार्टी की सरकार कायम की थी। आजादी के बाद असम में यह पहली गैर-कांग्रेसी सरकार थी। सत्ता से हटा दी गई कांग्रेस बारबोरा सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए किसी उपयुक्त मुद्दे की तलाश में थी। और उसे तुरंत एक मुद्दा मिल गया। कांग्रेस के नेताओं को पता था कि अगर वे 'बाहरी लोगों' के प्रवाह के घिसे-पिटे नारे की तोतारटंत करते रहे, तो वे जनसमर्थन नहीं जुटा पाएंगे। इसलिए, उन्होंने चालाकी से 'बाहरी लोगों' शब्द को बदल कर 'घुसपैठिए' कर दिया और सीमा से लाखों बांग्लादेशी नागरिकों की कथित अवैध घुसपैठ के बारे में होहल्ला मचाना शुरू कर दिया।

मार्च 1979 में, मंगलदोई निर्वाचन क्षेत्र के तत्कालीन सांसद के अचानक निधन के बाद, वहां मध्यावधि चुनाव घोषित किया गया था। उस समय, सीमा सुरक्षा पुलिस इस घोषणा के साथ बाहर निकली कि मतदाता सूची में 47,658 बांग्लादेशी नागरिकों के नाम शामिल हैं। ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (आसू) और ऑल असम गण संग्राम परिषद (एएजीएसपी) ने तत्काल मांग की कि मध्यावधि चुनाव तब तक नहीं किया जाएगा जब तक बांग्लादेशियों के नाम मतदाताओं की सूची से हटा नहीं दिए जाते। सभी घोर सांप्रदायिक, इलाकापरस्त, नस्लीय, अलगाववादी ताकतें इस कलरव गान में शामिल हो गईं और आरोप लगाया कि बांग्लादेशी नागरिकों के निरंतर अवैध प्रवासन से असमिया भाषी लोगों का अस्तित्व दांव पर लग गया है। बुर्जुआ प्रेस की सरपरस्ती में, आसू और एएजीएसपी आंदोलनकारियों ने अपने अंधराष्ट्रवादी नारे को देशभक्ति के लबादे में चतुराई से रंग लिया ताकि वह रोजी-रोटी की बढ़ती समस्याओं से कमर तुड़वाए हुए आम लोगों के मन को भा जाए। वे यह भी कहने लगे थे कि चूंकि भारत और बांग्लादेश के बीच अंतरराष्ट्रीय सीमा खुली थी, इसलिए हजारों घुसपैठिए असम को बांग्लादेश में मिला देने और 'ग्रेटर बंगाल' (विशाल बंगाल) बनाने के घिनौने उद्देश्य से असम में आए दिन घुस रहे हैं। उन्होंने गरीब शोषित-पीड़ित असमिया भाषी लोगों के बीच संकीर्ण इलाकापरस्ती का जुनून भड़काया और कहा कि जल्द ही ये घुसपैठ करने वाले विदेशी नागरिक संख्या में उनसे ज्यादा हो जाएंगे, असमिया भाषी अपनी अनूठी पहचान खो देंगे, अपनी संस्कृति और भाषा खो देंगे और आखिरकार अपनी राजनीतिक शक्ति भी खो देंगे। सभी विभाजनों से ऊपर उठकर असम के मेहनतकश लोगों के एक शक्तिशाली संयुक्त जनवादी आंदोलन की अनुपस्थिति में और साझे दुश्मन और सभी बुराइयों की जड़ सत्तारूढ़ पूंजीवाद के खिलाफ एक साझे ध्येय-हित को साझा करने के साथ-साथ एक परिपूरक वैचारिक अभियान की कमी में आम असमिया भाषी लोग संकीर्ण अंधराष्ट्रवादी नारे से बरगलाए गए और सांप्रदायिक-इलाकापरस्त-अंधराष्ट्रवादी तनावों से माहौल गरमा गया था।

हमारी पार्टी द्वारा चलाया गया वैचारिक अभियान

इस तरह के सभी हानिकारक सोच-विचारों और धोखाधड़ी को मुंहतोड़ जवाब देने और शोषित-पीड़ित लोगों, विशेष रूप से गुमराह कर दी गई असमिया भाषी आबादी के सामने सच्चाई को उजागर करने के लिए अकेले ही हमारी पार्टी द्वारा एक वैचारिक अभियान शुरू किया। आज भी सभी बाधाओं और प्रतिकूलताओं को बहादुरी से पार करते हुए हम उस संघर्ष को लगातार जारी रख रहे हैं। इस मामले की गहराई में जाकर, हमारी पार्टी ने दिखाया कि हमारे जैसा पूंजीवादी देश एक वर्ग-विभाजित समाज है। विभाजन असमिया और बंगाली या हिंदुओं और मुसलमानों के बीच नहीं है। विभाजन भाषा, धर्म, वंशमूल, पंथ या जाति का लिहाज किए बिना मुट्ठी भर कुछ अति अमीरों और विशाल संख्यक शोषित-पीड़ित गरीबों के बीच है। समय बीतने के साथ, अमीर अमीर होते जा रहे हैं और गरीब गरीब होते जा रहे हैं। 1% अमीर धनकुबेर असंख्य गरीबों को अधिक से अधिक बदहाली में धकेल कर पल रहे हैं। शोषकों और शोषितों के हित समान नहीं हैं बल्कि एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं। इसलिए, इस महत्वपूर्ण तथ्य को मद्देनजर रख कर सभी प्रश्नों और मुद्दों पर विचार किया जाना चाहिए। हमने दृढ़ता से असम के लोगों को यह अहसास करने के लिए कहा कि विदेशी नागरिकों के निरंतर प्रवाह और परिणामस्वरूप मूल असमिया लोगों को पहचान संकट पैदा हो जाने के खतरे के बारे में पूरी तरह झूठा शरारती अभियान निहित स्वार्थों द्वारा बुरी से बुरी किस्म की सांप्रदायिकता, अलगाववाद और यहां तक कि देश से अलग राज्य बनाने के विभाजन को फैलाने के उद्देश्य से जानबूझ कर चलाया जा रहा है और इस प्रकार उनकी गरीबी और दु:ख-तकलीफ के वास्तविक कारण से उनका ध्यान दूसरी तरफ फेरा जा रहा है और उन्हें भ्रातृघाती दंगे-फसादों और रक्तपात में संलिप्त किया जा रहा है। असमिया भाषी लोगों के राजनैतिक शक्ति खो देने का प्रचार एक और हौआ है क्योंकि राजनीतिक सत्ता का सवाल राज्यसत्ता के सवाल से ओतप्रोत रूप से जुड़ा हुआ है जिस पर अब सत्ताधारी भारतीय एकाधिकारी पूंजीपति काबिज हैं। हमने यह भी कहा कि इतिहास में कहीं भी ऐसा नहीं मिलेगा कि आम मेहनतकश लोगों ने आक्रमणकारियों की तरह काम किया हो, कभी भी अपनी भाषा और उनकी संस्कृति को मेहनतकश लोगों के अन्य तबको पर थोपा हो, कभी भी मेहनतकश लोगों के किसी अन्य तबके से संख्या में अधिक नहीं होने की कोशिश की हो। आक्रमण, विदेशी भूमि के जबरन कब्जे, आम लोगों को उनके आगे झुकने के लिए मजबूर करना, आम लोगों को उनके निर्देशों के अधीन करना राजा-महाराजाओं द्वारा किया गया था। आज, यह साम्राज्यवादी पूंजीवादी लुटेरे हैं जो ये सब दुष्टताभरी हरकतें कर रहे हैं। दूसरी तरफ, आम मेहनतकश जन हमेशा एक साथ रहते हैं, एक साथ काम करते हैं, कंधे के कंधे मिला कर चलते हैं, एक-दूसरे की मदद करते हैं, एक-दूसरे से सीखते हैं और एक-दूसरे की खुशियों और दुखों को साझा करते हैं। यह आज भी सच है। आम लोग एक-दूसरे से कभी नफरत नहीं करते हैं, कभी भी समाज के किसी भी साथी सदस्य के बारे में कोई दुर्भावना नहीं रखते हैं। ये तो दमनकारी शासकों, शोषण करने वाले शासक वर्ग और उनके ताबेदार हैं जो आम लोगों के बीच फूट डालने के लिए इस तरह के हानिकारक सोच-विचारों और द्वेष-भावनाओं को कृत्रिम रूप से पनपाने और तर्कसंगत विचार प्रक्रिया को कुंद करने पर आमादा रहते हैं। संक्षेप में, यह हमारे वैचारिक अभियान का लब्बो लुआब रहा है और इसने जनता के सच्चाई पसन्द समझदार तबके के बीच जबरदस्त प्रभाव डाला है, और आम मेहनतकश लोगों में से कई जो अब तक सड़े-गले विचारों की अंधी गली में जा पहुंचे थे, सोच के सही रास्ते पर वापस लौट आये हैं।

एनआरसी के संबंध में हमारे ठोस सुझाव

सामाजिक-राजनीतिक हकीकत के इस तरह के सही अहसास के आधार पर और आम असमिया भाषी लोगों द्वारा पहचान और भाषा खोने के बारे में एक मौजूदा आशंका से प्रेरित गंभीर वस्तुगत परिस्थिति में, 1980 में हमारी पार्टी चार सूत्री फार्मूला लेकर आई जिन्हें नीचे उल्लिखित किया जा सकता है : -

1) हमने सुझाव दिया था कि भाषाई अल्पसंख्यकों उनकी संबंधित भाषाओं के अधिकारों को प्रभावित किए बिना, असमिया भाषा का दर्जा राज्य में आबादी के किसी भी तरह के परिवर्तन से जोड़े बिना असम की राजकीय भाषा के रूप में हर कीमत पर बनाए रखा जाना चाहिए। असमिया की वर्तमान स्थिति को राज्य भाषा के रूप में सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रस्ताव पारित किया जा सकता है या संसद में अधिनियम पारित किए जा सकते हैं।

2) विदेशी नागरिकों की निरंतर और अप्रतिबंधित प्रविष्टि के मुद्दे के बारे में असम के लोगों की संवेदनशीलता और भावनाओं को भांपते हुए, हमने सुझाव दिया था कि सीमाओं से अवैध विदेशियों के किसी भी संभावित गुप्त प्रवेश को रोकने के लिए अंतरराष्ट्रीय सीमाओं पर अचूक उपाय किए जाने चाहिए। खुफिया मशीनरी को सीमा पर किसी भी अवांछित घुसपैठिए को पकड़ने के लिए पर्याप्त सक्षम होना चाहिए और उसे निष्पक्ष परीक्षण के लिए ट्रिब्यूनल को भेजना चाहिए।

3) तीसरा, हमने यह भी सुझाव दिया था कि असम के त्वरित आर्थिक और औद्योगिक विकास के लिए सरकार द्वारा एक व्यापक पैकेज योजना अपनाई जानी चाहिए।

4) 25 मार्च, 1971 को विदेशी नागरिकों की पहचान के लिए कट-ऑफ तारीख के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए और सभी प्रासंगिक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मानदंडों, कानूनों और परंपराओं का पालन करते हुए पहचान की प्रक्रिया शुरू कर दी जानी चाहिए। जो लोग कट-ऑफ तारीख से पहले भारत आए थे, उन्हें भारतीय नागरिकों के रूप में माना जाना चाहिए और जो लोग उस तारीख के बाद भारत आए हैं उन्हें अंतरराष्ट्रीय कानूनों और परंपराओं का पालन करते हुए उनके अपने-अपने देशों में भेज दिया जा सकता है।

असमिया और गैर-असमिया दोनों तरह के लोगों ने पूरी तरह से हमारी पार्टी के चार सूत्री फार्मूले का स्वागत किया था। हम अभी भी दृढ़ता से इस बात पर जोर देना चाहते हैं कि असम में विदेशी नागरिकों की समस्या केवल इसी तरह से हल की जा सकती है। इस रास्ते पर चलने के बजाय, यदि लाखों लाख प्रामाणिक भारतीय नागरिकों के नाम मतदाता सूचियों या

(शेष पृष्ठ 7 पर)

कॉ. शिवदास घोष चिंतनधारा जिन्दाबाद!

(पृष्ठ 2 का शेष)

मार्क्सवादियों और समाजवादियों में ही यह भटकाव ज्यादा देख पा रहा हूँ। अनेक मार्क्सवादी मार्क्सवाद के प्रयोजन-तत्व का प्रयोग करते हुए उसी दरम्यान मोटे अर्थ में 'प्रयोजनवादी' हो गये हैं। तात्कालिक आवश्यकता मनुष्य के यथार्थ प्रयोजन को प्रतिबिम्बित कर रही है या नहीं, अर्थात् वह सामाजिक प्रगति, मजदूर वर्ग की क्रांतिकारी चेतना और क्रांति की परिपूरक है या नहीं–यह सब विचार करके देखने की उन्हें फुर्सत नहीं है। मार्क्सवाद जिस प्रयोजन या 'नेसेसिटी' की बात करता है, जिस प्रयोजन-तत्व की बात विज्ञान करता है, वह 'प्रयोजनबोध' प्रगति और समाज-कल्याण के हित में होता है।

वह प्रयोजनबोध जो समाज में वर्ग-संघर्ष के विकास और प्रगति के जरिये क्रांतिकारी चेतना की लगातार अभिव्यक्ति के रास्ते व्यक्ति के यथार्थ विकास और उन्नति का परिपूरक है–वही है मार्क्सवाद और विज्ञान के नजरिये से 'रिकॉग्नीशन ऑफ नेसेसिटी'– प्रयोजनबोध की स्वीकृति। इस प्रयोजन के साथ व्यक्ति की फौरी जरूरत या प्रयोजनबोध का विरोध दिखायी दिया करता है। इस जरूरत या प्रयोजन के साथ कभी-कभी राजनैतिक पार्टी की तात्कालिक आवश्यकताओं का भी विरोध हो सकता है। वैसी हालत में हमें पार्टी की ऐसी आवश्यकताओं का दमन करना होगा। लेकिन राजनीतिक आन्दोलन से लेकर सांस्कृतिक आन्दोलन के लगभग हर क्षेत्र में आज जिस प्रयोजनवाद का असर फैलता जा रहा है, उसे संक्षेप में 'प्रैग्मेटिज्म' या निहायत निकृष्ट किस्म का प्रयोजनवाद कहा जा सकता है। आजकल पत्र-पत्रिकाओं में बहुतेरे पण्डितों द्वारा अक्सर यह चर्चा करते देखा जा रहा है–''वे बड़े युटोपियन (कल्पना-विलासी) हैं, उनकी एप्रोच (दृष्टिकोण) थोड़ी प्रैग्मेटिक होनी चाहिये।'' यह सब बातें सुनकर लगता है कि या तो ये जानते नहीं हैं कि प्रैग्मेटिज्म एक अति निकृष्ट किस्म का भाववादी दर्शन है, या फिर जानबूझ कर ऐसी भूल कर रहे हैं। 'प्रैग्मेटिक कन्सीडरेशन' शब्द को सीधे तौर से राजनीतिक परिभाषा में कहने पर मतलब 'अपौरचुनिस्ट कन्सीडरेशन' अर्थात् अवसरवादी सोच-विचार ही ठहरता है। दरअसल इन लोगों ने 'प्रैक्टिकल (व्यावहारिक) शब्द के साथ 'प्रैग्मेटिक' शब्द को गड्डमड्ड कर डाला है। नहीं तो, इन्हें जानना चाहिए था कि विज्ञान की भाषा में जो 'प्रैक्टिकल कन्सीडरेशन' (व्यावहारिक सोच-विचार) है, वह 'प्रैग्मेटिक एप्रोच' (प्रयोजनवादी दृष्टिकोण) का बिल्कुल विरोधी है। यह सत्य को प्रतिबिम्बित नहीं करता, बल्कि यह तो प्रयोजन सम्बंधी गलत समझ है। यही प्रयोजनवाद देश का सर्वनाश कर रहा है। इस तरह के प्रयोजनवाद का बढ़ता हुआ प्रभाव हमारे समाज के लोगों को ज्यादा से ज्यादा आत्म-केन्द्रित बनाता जा रहा है तथा जन-आन्दोलन की प्राणसत्ता को ही नष्ट किये जा रहा है।

इन विषयों पर चर्चा के जरिए मैं एक ऐसा मापदंड तय करने की कोशिश कर रहा हूँ कि जिससे सांस्कृतिक आन्दोलन की समस्याओं के स्वरूप को समझा जा सके। इन चर्चाओं से एक बात तो साफ जाहिर हो जाती है कि केवल व्यक्तिगत समझ के आधार पर निर्भर रह कर ही किसी आन्दोलन को–चाहे वह सांस्कृतिक आन्दोलन हो या राजनीतिक आन्दोलन–प्रगतिशील या प्रतिक्रियावादी करार दे देना भूल होगी। हमें इतिहास और वैज्ञानिक तर्क विचार की कसौटी पर तथा इतिहास और वैज्ञानिक तर्क-पद्धति के आधार पर प्राप्त अनुभवों से मिलाते हुए विचार करना होगा। यदि विचार की इस पद्धति का अनुसरण कर हम लोग रवीन्द्रनाथ, शरत्चंद्र और नजरूल संस्कृति की गति-प्रकृति और स्वरूप को निर्धारित करना चाहें तो सबसे पहले हमें यह जानना पड़ेगा कि कौन-सी परिस्थिति में उस संस्कृति का जन्म हुआ था। (26 मई, 1969)

(पृष्ठ 6 का शेष)

असम में एनआरसी

दमनकारी पूंजीवाद की रक्षक सांप्रदायिक–इलाकापरस्त फूटपरस्त ताकतों की साजिश को नाकाम करें

एनआरसी से काट करके 'विदेशी' घोषित किया गया, तो इस समस्या का समाधान नहीं किया जा सकेगा। इसके बजाय, इस तरह के फासीवादी उपायों के माध्यम से, राज्य के लोगों के बीच विभाजन को और बढ़ाया जाएगा, सांप्रदायिकता एक विकराल रूप ले लेगी और बहुसंख्यकों और अल्पसंख्यक समुदायों के बीच शांति और सद्भावना में बड़ा भारी खलल पड़ जाएगा।

हमारी आशंका सही साबित हुई। वर्ष 1983 असम के इतिहास में एक काला काल था। सशस्त्र दंगाइयों की भीड़ ने असम के कई गांवों को घेर लिया था, जिनमें ज्यादातर धार्मिक अल्पसंख्यक रहते थे और उन पर घातक हमले किए थे। राज्य के कई स्थानों पर, विशेष रूप से नेल्ली, चॉकहोआ, मुकालमोआ और गोहोपुर में, अल्पसंख्यक समुदायों के लोग निर्दयतापूर्वक मारे गए थे। उन भयानक दिनों में, आंदोलनकारियों से असहमति की आवाज व्यक्त करने की किसी को अनुमति नहीं थी। राज्य में एक फासीवादी माहौल था। लेकिन 1983 के इस तरह के नरसंहार और बर्बरता की देश के भीतर और बाहर कड़ी निंदा की गई थी। इस चौतरफा भर्त्सना से, भारत सरकार ने 'अवैध प्रवास (निर्धारण ट्रिब्यूनल) अधिनियम' (आईएमडीटी कानून) लागू किया, जो कम से कम बाहरी रूप से, धार्मिक व भाषाई अल्पसंख्यक समुदायों के प्रामाणिक भारतीय नागरिकों के बदतरीन किस्म के दमन-उत्पीड़न और जलालत के खिलाफ कुछ सुरक्षा उपाय प्रदान करता है। बाद में, अंधराष्ट्रवादी संगठनों से सांठगांठ में घोर हिंदू सांप्रदायिक आरएसएस-बीजेपी ने अपने तरकश में सभी भ्रामक तीरों और तकनीकों को सजा कर अधिनियम के खिलाफ चिल्लपों मचायी। यह खेद की बात है कि तथाकथित विपक्ष द्वारा इस उद्देश्य प्रेरित अधिनियम का कोई प्रभावी विरोध नहीं किया गया था। अंत में, आरएसएस-बीजेपी और उनके सहयोगी संगठन सुप्रीम कोर्ट से आईएमडीटी अधिनियम को रद्द करवाने में सफल रहे।

इस संदर्भ में इसका उल्लेख किया जा सकता है कि हमारी पार्टी द्वारा शुरू किए गए गहन वर्ग-आधारित वैचारिक अभियान के परिणाम स्वरूप, हम राज्य के अल्पसंख्यक बहुल क्षेत्रों में व्यथित युवाओं को यह समझाने-बुझाने में काफी हद तक सफल रहे कि अंधराष्ट्रवादी और साम्प्रदायिक ताकतों के भड़कावे-उकसावे पर वे कट्टरपन और आतंकवाद का रास्ता न अपनायें।

सात पार्टियों का गठबंधन और एजीपी शासन

असम आंदोलन द्वारा राज्य में पैदा की गई विस्फोटक स्थिति का सामना करने के लिए कांग्रेस (एस), लोक दल, पीडीपी, एसयूसीआई (सी), सीपीआई, सीपीआई (एम) और आरसीपीआई का संयुक्त मंच हमारी पार्टी की पहल पर बनाया गया था। इस संयुक्त पहल ने तनाव को कम करने में बहुत मदद की। सात पार्टियों के इस गठबंधन के दबाव में, विदेशी नागरिकों का पता लगाने के लिए 1971 को कट-ऑफ वर्ष माना गया था। इसके बाद, केंद्र सरकार, राज्य सरकार और एएएसयू के बीच 15 अगस्त, 1985 को 'असम समझौते' के रूप में जाना जाने वाला एक समझौता किया गया था। इस समझौते ने 25 मार्च, 1971 को असम में विदेशियों की पहचान के लिए कट-ऑफ तारीख के रूप में स्वीकार किया था। इसके बाद, एएएसयू नेतृत्व ने असम गण परिषद (एजीपी) नाम से एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल का गठन किया था, और यह स्पष्ट था कि उस समय कांग्रेस सरकार के साथ अन्दरखाने कुछ मिलीभगत थी कि राज्य में सत्ता में कौन सा बैठेगा। एजीपी ने चुनाव लड़ा, इसे जीता और 10 वर्षों तक बारी-बारी से राज्य पर शासन किया। एजीपी अब राज्य में सत्तारूढ़ बीजेपी के साथ गठबंधन में सत्ता साझा कर रहा है।

अपने दो कार्यकाल के शासन के दौरान, एजीपी सरकार ने लाखों लाख विदेशियों का 'पता लगाने' की कोशिश की, उन्होंने एक बार फिर जोरशोर से बावेला मचाया और इसके तहत बार-बार की गई सुनवाई में अल्पसंख्यक समुदायों के गरीब लोगों को खुद को प्रामाणिक भारतीय नागरिकों साबित करने के लिए अपने कागज पत्र दिखाने आना पड़ा लेकिन इन तमाम कवायदों के बावजूद, एजीपी सरकार को 'लाखों विदेशी' नहीं ढूंढ़े मिले, जिनके बारे में उन्होंने शोर मचाया था। 1997 में शासन में अपने दूसरे कार्यकाल के दौरान, इसने दूसरी चाल चली। इसने मनमाने ढंग से 3.7 लाख धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक समुदायों के असली भारतीय नागरिकों को 'डी' मतदाताओं के रूप में चिह्नित किया– 'डी' का अर्थ संदिग्ध है–और उनसे उनका मतदान अधिकार छीन लिया। प्रारंभ में, यह घोषित किया गया था कि इन सभी 'संदिग्ध' मामलों को 6 महीने के भीतर सत्यापित किया जाएगा और 'डी' मतदाताओं के नाम गुण-दोष के आधार पर मतदाता सूची में शामिल कर लिए जाएंगे। हालांकि, 20 से अधिक वर्ष बीत चुके हैं और फिर भी यह सत्यापन नहीं किया गया है। नतीजतन, इन लोगों का मतदान अधिकार निलंबित कर दिया गया है। यह अजीब बात है कि इनमें से 97% तथाकथित 'डी' मतदाता जिन्होंने उच्चतर न्यायालयों में अपनी नागरिकता का दावा करना पसंद किया था, वास्तविक भारतीय नागरिक साबित हुए थे। इससे पता चलता है कि 'डी' वोटरों को कानून द्वारा निर्धारित जांच की उचित प्रक्रिया के बिना ही अंधाधुंध चिह्नित किया गया था। वर्तमान में, राज्य में लगभग 2.5 लाख 'डी' मतदाता हैं। उनमें से कुछ को उनकी जानकारी के बिना ही विदेशियों के ट्रिब्यूनलों को संदर्भित किया गया था। इसलिए, वे ट्रिब्यूनल के सामने उपस्थित नहीं हो सके और इसलिए उन्हें एकतरफा 'विदेशी' घोषित कर दिया गया था। इन लोगों को हिरासत शिविरों में भेजा गया है।

यह कहा जाना चाहिए कि जब धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों से जुड़े कई लाख वास्तविक नागरिकों को ब्रांड करने के उनके प्रयास सफल नहीं हुए, तो अंधराष्ट्रवादी शक्तियों ने एनआरसी तैयार करने की मांग उठायी ताकि इसके जरिये वे अपना उद्देश्य प्राप्त कर सकें। यहां उल्लेख करना उचित है कि इन 'डी' मतदाताओं के नामों को चालू एनआरसी में शामिल नहीं किया जाएगा। उन्हें नियमितीकरण के लिए आवेदन करने से भी वंचित कर दिया गया है जब तक कि उन्हें सक्षम ट्रिब्यूनलों या न्यायालयों द्वारा सच्चे भारतीय नागरिक घोषित नहीं कर दिया जाता है। धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के लगभग 4,500 व्यक्तियों के नामों को छोड़ दिया गया है जिन्हें विरासत डेटा के उचित सत्यापन के बाद एनआरसी के पहले मसौदे में शामिल किया गया था, यह कह कर इनके नाम काट दिए गए हैं कि उन्हें ट्रिब्यूनलों द्वारा एकतरफा फैसला करके विदेशी घोषित किया गया है।

निहित स्वार्थों की घिनौनी साजिश को नाकाम कर मेहनतकश लोगों की एकता और भाईचारे को बनाए रखें

एनआरसी तैयार करने के इर्द-गिर्द असम में मौजूदा हालात विस्फोटक हैं। जुल्मो सितम के सबसे बुरे रूप की पृष्ठभूमि में, धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक समुदायों के 4 लाख से अधिक वास्तविक भारतीय नागरिकों को उनके वोटिंग अधिकारों से वंचित कर देना, उन्हें 20 वर्षों तक 'डी' या संदिग्ध मतदाताओं का ठप्पा लगाकर रखना, एकतरफा फैसले के जरिये उनमें से कई को विदेशी नागरिक घोषित करना और उनमें से कई को तथाकथित 'हिरासत शिविर' में भेजना जो कि हिटलरी शासन के कुख्यात यातना शिविरों की तरह हैं, जबरन उन लोगों को रातोंरात बांग्लादेश में निर्वासित कर देना –इन सभी ने धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक समुदायों के असली भारतीय नागरिकों की रातों की नींद हराम कर दी है। उन सभी को अपनी नागरिकता खोने का दिल में गहरा समाये बैठा डर सता रहा है। पूरी प्रक्रिया अंधराष्ट्रवादी आरएसएस, बीजेपी और अन्य सांप्रदायिक ताकतों के अत्यधिक अन्यायपूर्ण दबाव के सामने झुकने से शुरू हुई है। भारत के रजिस्ट्रार जनरल जिनको संवैधानिक रूप से यह कार्य सौंपा गया है, जिसे बहुत ही असामान्य रूप से शक्तिहीन बना दिया गया है। बहुत ही असामान्य रूप से सुप्रीम कोर्ट पूरी कवायद को चला रहा है। फिर जिस तरह से सुप्रीम कोर्ट पूरी प्रक्रिया की देखभाल कर रहा है उससे लगता है कि अल्पसंख्यकों के सरोकारों को प्रभावी ढंग से तवज्जो नहीं दी जा रही है। इसलिए स्थिति बहुत तनावपूर्ण है। गहरी आशंका और गहरी हो रही है। इन परिस्थितियों में, हम मेहनतकश आम लोगों के सभी तबकों से आग्रह कर रहे हैं कि फूटपरस्ती की राह से दूर रहें, लाखों लाख वास्तविक भारतीय नागरिकों की नागरिकता को छीनने के षड्यंत्र को विफल करने के लिए मजबूती से एकजुट रहें।

फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि एक झांसा है

रोहतक (हरियाणा) : 26 जुलाई को ऑल इंडिया किसान खेत मजदूर संगठन ने इस बात का खंडन किया है कि भाजपा की मोदी सरकार ने खरीफ फसलों के एमएसपी की घोषणा में स्वामीनाथन किसान आयोग की सिफारिश लागू कर दी है और किसानों को उनकी फसलों के दाम लागत से डेढ़ गुना दे दिए हैं।

प्रेस के नाम जारी संयुक्त बयान में ऑल इंडिया किसान खेत मजदूर संगठन के प्रदेश अध्यक्ष कॉमरेड अनूप सिंह मातनहेल व प्रदेश सचिव कॉमरेड जयकरण मांडोठी ने कहा कि सरकार का यह प्रचार सरासर गलत है जो किसानों को बहकाने और देश को गुमराह करने के लिए किया जा रहा है। असलियत यह है कि जो न्यूनतम समर्थन मूल्य दिया है वह पुराने फार्मूले ए 2 + एफएल के आधार पर बहुत ही कम दिया है परंतु किसान संगठन संपूर्ण लागत वाले सी2 + एफएल फार्मूले पर एमएसपी मांग रहे हैं। इसमें अन्य खर्चों के अलावा जमीन का किराया, लोन का ब्याज व मशीनों की घिसाई को भी जोड़ा जाता है। स्वामीनाथन ने सी2 के आधार पर एमएसपी देने की सिफारिश की थी। दोनों किसान नेताओं ने कहा कि हकीकत तो यह है कि किसानों को मंडियों में घोषित एमएसपी भी नहीं मिलता। इस देश के 6% किसान ही एमएसपी के दायरे में आते हैं, बाकी 94% किसानों को अपनी फसल ओने-पौने दामों पर बेचनी पड़ती है। सरकार गेहूं की मात्रा 23%, मोटे धान 34% व दालें 15% ही खरीदती है। सब्जी, फल, दूध व अन्य फसलें सब बाजार के हवाले हैं। बिचौलिए, जमाखोर व बड़े व्यापारी किसानों से सस्ता लेकर महंगा बेचते हैं। भाजपा सरकार ने लागत से डेढ़ गुना दाम देने, कर्ज खत्म करने, सालाना दो करोड़ रोजगार देने, काला धन वापस लाने जैसे किसी भी वादे को पूरा नहीं किया। सत्ता में आते ही फसलों के बोनस पर रोक लगा दी, कृषि बजट बढ़ाया नहीं, डीजल के दाम बेतहाशा बढ़ा दिए, खाद डीएपी महंगा कर दिया, कर्ज खत्म नहीं किया। यही नहीं फसल बीमा के नाम पर किसानों को लूटा जा रहा है। इसलिए 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का आश्वासन महज एक झांसा है, एक जुमला है।

संगठन गांव-गांव में जाकर असल लागत से फसलों के डेढ़ गुना दाम देने, खेती के सभी कर समाप्त करने, 12 महीने रोजगार देने खाद-बीज-डीजल आदि सस्ता करने और बुढ़ापा पेंशन 5000 रुपये महीना करने की मांगों को लेकर जोरदार आंदोलन चलाएगा।

R.N.I. No.- 43022/85
P.R.No.-DL(C)-01/1123/2018-20
Posting at New Delhi PSO on 7–8 and 22–23 of every month, Fortnightly, Date of Publication : August 5, 2018

असम में ड्राफ्ट एनआरसी से जायज भारतीयों के नाम जानबूझ कर निकाल देने की निंदा

(पृष्ठ 1 का शेष)

यह सूची तैयार करने में नस्ली और सांप्रदायिक नफरत से जन्मी एक सोची-समझी साजिश की बू आती है। हालांकि दिखावा ऐसा किया गया है कि गैरकानूनी प्रवासियों या घुसपैठियों, जिन पर 'विदेशीं' होने का ठप्पा लगा हुआ है, उनकी शिनाख्त करने के लिए यह भारी कवायद की गई हो। हकीकत यह है कि एक इतनी बड़ी आबादी जो अब तक देश की नागरिकता का अभिन्न अंग रही हो, उसे वस्तुतः कलम की एक नोक से अवांछित घोषित कर देना बीजेपी-नीत राज्य और केंद्र सरकारों की धोंस और दमन का परिचायक है। नस्लीय-सांप्रदायिक- नृवंशीय-धार्मिक बंटवारे और नफरत को बीजेपी मुस्तैदी से बढ़ावा दे रही है। बुर्जुआ वर्ग के घृणित षड्यंत्र की ताबेदारी में हर संभव तरीके से लोगों में फूट डाल रही है। भारत के किसी भी अन्य राज्य में और इस सन्दर्भ में, दुनिया में कहीं भी किसी ने कोई ऐसी फासीवादी कवायद न सुनी होगी, न देखी होगी जहां सरकार ने अपने खुद के लोगों की नागरिकता छीनने का फैसला लिया हो और वह भी बाकायदा कानूनी ठप्पा लगा कर। बिना इस बात की परवाह किए कि ऐसी एक कार्रवाई के नतीजतन कितना भयंकर मानवीय संकट पैदा हो जाएगा जब इन अभागे बेघर मेहनतकश लोगों को जबरदस्ती उनकी मातृभूमि से उखाड़कर राज्य विहीन कर दिया जाएगा और एक आसन्न तबाही के दुःस्वपन से सिहर उठने के लिए छोड़ दिया जाएगा।

ऐसा एक अमानवीय कृत्य केवल ऐसी एक सरकार-प्रशासन द्वारा करना संभव है जिसकी फासीवादी मंशा षड्यंत्रकारी तरीकों से नागरिकों के एक लक्षित तबके के मूलभूत अधिकारों को छीन लेना हो। इसके अलावा, असम के लिए एनआरसी तैयार करने की इस कवायद को बीजेपी-नीत केंद्र व राज्य सरकारों तथा घोर क्षेत्रीयतावादी ताकतों द्वारा संयुक्त रुप से अंजाम दिया गया है। इसका एकमात्र उद्देश्य सूची से बाहर कर दिए गए अधिकतर उन लोगों को पूर्ण तबाही की तरफ धकेल देना है जो नितांत गरीब और बेसहारा हैं। इस मनहूस कदम के पीछे बीजेपी-नीत केंद्र और राज्य सरकारों की यह मंशा साफ जाहिर है कि जीवन की ज्वलंत समस्याओं पर बिना किसी जाति-धर्म-भाषा का भेद किए आसाम के मेहनतकश लोगों के सभी तबकों के सशक्त संयुक्त आंदोलन के विकास और बढ़ोतरी को रोक दिया जाए।

असम की सांप्रदायिक-क्षेत्रीयतावादी ताकतों के घृणित स्वार्थ की ताबेदारी में रचे गए इस फासीवादी षड्यंत्र की हम घोर निंदा करते हैं और जोरदार मांग करते हैं कि उन तमाम जायज भारतीय नागरिकों के नाम तुरंत शामिल किए जाएं जिन्हें लगता है कि निश्चित द्वेष भावना के चलते ड्राफ्ट एनआरसी में नहीं जोड़ा गया है।

असम के साथ-साथ सारे देश के सही सोच रखने वाले जनवाद पसंद लोगों का हम आह्वान करते हैं कि वे दीर्घ स्थाई सशक्त संयुक्त आंदोलन गठित करने के लिए आगे आएं ताकि यह घृणित षड्यंत्र रचने से बाज आने के लिए बीजेपी-नीत सरकार को मजबूर किया जा सके।

केंद्र सरकार द्वारा आईडीबीआई बैंक के शेयर बेचे जाने पर एआईयूटीयूसी ने जतायी चिंता

आईडीबीआई बैंक के शेयरों की बिक्री एलआईसीआई को किये जाने के माध्यम से इसके बहुसंख्यक शेयरों को कम करने के केंद्र सरकार के कदम पर गहरी चिंता के साथ ऑल इण्डिया यूनाइटेड ट्रेड यूनियन सेण्टर (एआईयूटीयूसी) के महासचिव कॉमरेड शंकर साहा ने 18 जुलाई 2018 को निम्नलिखित बयान जारी किया : "विभिन्न प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और सोशल मीडिया की कई रिपोर्टों से हमने यह गौर किया है कि केंद्र सरकार आईडीबीआई बैंक का निजीकरण करने के बारे में सोच रही है। आईडीबीआई में बहुसंख्यक शेयर लाइफ इंश्योरेंस कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया (एलआईसीआई) को बेचने के केंद्र सरकार के इस कदम का हम दृढ़ता से विरोध करते हैं जिससे बैंक के शेयरों की 51% से अधिक हिस्सेदारी धारक एलआईसीआई को बना दिया जाएगा। हमारा दृढ़ता से मानना है कि यह बैकडोर से निजीकरण का एक छिपी हुई कदम है चूंकि बाद में एलआईसीआई बैंक में शेयरों की अपनी हिस्सेदारी को प्राइवेट कारपोरेट घरानों के हवाले करने का फैसला कर सकती है। केंद्र सरकार के इस कदम का विरोध नहीं किया गया, तो यह अन्य पीएसयू बैंकों का भी निजीकरण करने के लिए इसी तरह के कदम की तरफ अग्रसर करेगा।

हम इस जघन्य कदम के खिलाफ दीर्घस्थायी प्रतिरोध आंदोलन छेड़ने के लिए आम तौर पर मजदूर वर्ग बिरादरी और खास तौर पर आईडीबीआई बैंक के कर्मचारियों और अधिकारियों का आह्वान करते हैं ताकि पिछवाड़े के रास्ते से आईडीबीआई बैंक के निजीकरण की योजना को तुरंत रोकने के लिए केंद्र सरकार को मजबूर कर सकें।"

सिक्किम एआईडीएसओ कार्यकर्ताओं की स्टडी क्लास

सिलीगुड़ी: स्टडी क्लास का संचालन करते हुए कॉमरेड सौरभ मुखर्जी

एआईडीएसओ की सिक्किम राज्य सांगठनिक कमेटी के तत्वावधान में स्टडी क्लास का आयोजन 14 और 15 जुलाई को पश्चिम बंगाल के सिलीगुड़ी में किया गया।

स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि के व्यावसायीकरण की समस्या क्यों हो रही है? वैश्वीकरण क्या है? देश के सामाजिक-आर्थिक जीवन में यह वैश्वीकरण किस प्रकार के बदलाव लाया हैं? समाजवाद क्या है? क्या भारत/सिक्किम में समाजवादी क्रांति संभव है? क्या क्रांतिकारी संगठन के बिना क्रांति संभव है? संस्कृति और क्रांतिकारी आंदोलन के बीच संबंध क्या है? जैसे इस तरह के महत्वपूर्ण मुद्दों पर केंद्रित थी स्टडी क्लास में चर्चाएं। प्रतिभागियों ने चर्चाओं में सक्रिय भूमिका निभाई।

एसयूसीआई (सी) पश्चिम बंगाल राज्य कमेटी के सदस्य कॉमरेड सौरभ मुखर्जी ने स्टडी क्लास का संचालन किया।

मुफ्त बस पास की मांग पर छात्र आन्दोलन की जीत

कर्नाटक : मुफ्त बस पास की मांग पर सड़कों पर उतरे छात्र

बैंगलोर (कर्नाटक) : कर्नाटक लगातार 4 वर्षों तक सूखे से बुरी तरह प्रभावित रहा है। सभी आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती महंगाई और नोटबंदी ने लोगों की दुख-तकलीफें और भी बढ़ा दी हैं। पिछले शैक्षणिक वर्ष में एआईडीएसओ ने सभी छात्रों को मुफ्त बस पास देने की मांग को लेकर कई आंदोलनों का नेतृत्व किया था। तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने इस योजना को लागू करने का वादा किया था। नए शैक्षणिक वर्ष की शुरूआत के साथ, छात्रों को मुफ्त बस पास की उम्मीद थी। केएसआरटीसी यह कह कर शुल्क वसूलने पर उतारू था कि सरकार ने अतिरिक्त राशि आवंटित नहीं की है। एआईडीएसओ ने फिर से हजारों में छात्रों को लामबंद किया और विरोध प्रदर्शन किया। लगभग 15 जिलों में विरोध प्रदर्शन किया गया था। इसके अलावा एआईडीएसओ के नेताओं का प्रतिनिधिमंडल कांग्रेस के जेडी (एस) गठबंधन सरकार के मुख्यमंत्री श्री कुमारस्वामी से मिला जिन्होंने मांग को सकारात्मक प्रतिक्रिया दी और सभी छात्रों को मुफ्त बस पास देने का आश्वासन दिया।

अंत में कांग्रेस-जेडी (एस) समन्वय समिति के अध्यक्ष और पूर्व मुख्यमंत्री श्री सिद्धारामैय्या और उपमुख्यमंत्री डॉ. जी. परमेश्वर ने घोषणा की कि निःशुल्क बस पास योजना लागू की जाएगी। कर्नाटक राज्य परिवहन मंत्री श्री तमन्ना ने प्रेस को यह भी बताया है कि मुफ्त बस पास योजना लागू की जा रही है। आदेश अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। इस कदम का स्वागत करने वाले एआईडीएसओ ने छात्र समुदाय को सतर्क रहने की भी चेतावनी दी है और यदि कोई मामला वापस ले लिया गया है, तो छात्रों को फिर से सड़कों पर उतरने की जरूरत पड़ सकती है।

दिल्ली के श्रमिकों की हड़ताल सफल

नई दिल्ली : केंद्र व दिल्ली सरकार की मजदूर विरोधी नीतियों के खिलाफ व 25 सूत्री मांगों को लेकर 20 जुलाई को एआईयूटीयूसी, इंटक, एटक व सीटू सहित 11 केंद्रीय ट्रेड यूनियनों की दिल्ली कमेटियों ने दिल्ली के श्रमिकों से हड़ताल का आह्वान किया गया था। इस हड़ताल का दिल्ली के सभी औद्योगिक क्षेत्रों में व्यापक असर हुआ। ओखला, पटपडगंज, झिलमिल, वजीरपुर, बवाना सहित सभी औद्योगिक क्षेत्रों में हजारों मजदूरों ने हड़ताल कर झंडे-बैनर लेकर बड़े-बड़े जुलूस निकले। श्रम कानूनों में मजदूर-विरोधी बदलाव वापस लो, दिल्ली सरकार घोषित न्यूनतम वेतन को सख्ती से लागू करो, ई.एस.आई, पीएफ, नियुक्ति पत्र, आदि से सम्बन्धित श्रमिक-हितेषी कानून लागू करो आदि नारे लगा रहे थे। अलग-अलग क्षेत्रों में इन जुलूसों का नेतृत्व कॉमरेड्स सुरेश, राकेश, प्रेमपाल, भास्करानन्द, बनवारी, देवेन्द्र कंन्हैया आदि ने किया। अस्पताल कर्मियों ने 7वें वेतन आयोग की सिफारिश अनुसार रोगी देखभाल भत्ता बढ़ाकर देने, धुलाई भत्ता 1800 महीना व समय पर प्रमोशन देने की मांगों को लेकर व हड़ताल के समर्थन में मांग दिवस मनाया।

दिल्ली : हड़ताल कर प्रदर्शन करते हुए जी.बी. पंत हस्पताल के

इस मौके पर जी.बी. पन्त, अरुणा आसिफ अली, गुरु गोविंद सिंह आदि हस्पतालों में कर्मचारियों ने श्रमिक सभाएं कर अपनी आवाज उठाई। जी.बी. पन्त अस्पताल में हुई सभा को कॉमरेड विजय कुमार, भरतवीर के अलावा एआईयूटीयूसी के सचिवमंडल सदस्य कॉमरेड आर.के. शर्मा ने सम्बोधित किया। अरुणा आसिफ अली हस्पताल में सभा को विपति राम व एआईयूटीयूसी के दिल्ली प्रदेशाध्यक्ष कॉ. हरीश त्यागी ने सम्बोधित किया। इस मौके पर एनआईसीडी व एनएमईपी में जुलूस निकाला गया। सभा को कॉ. राजीव कुमार ने सम्बोधित किया। एएनएम व एलएचवी नर्सिस की तरफ से एमसीडी मुख्यालय सिविक सेंटर पर समय पर वेतन व प्रमोशन की मांग पर वहाँ हुए प्रदर्शन को शकुन्तला, सन्तोष डागर, नरेश रोहिल्ला, सन्तोष चौहान व एनपीएचए दिल्ली चौप्टर के चेयरमैन कॉ. राम बाबू पांडये और कॉ. हरीश त्यागी ने सम्बोधित किया।

दिल्ली आशा वर्कर्स एसोसिएशन (दावा) यूनियन के विभागीय मुख्यालय पर जोरदार प्रदर्शन कर आशा को सरकारी कर्मचारी का दर्जा दो, इंसेंटिव नही वेतन दो और दावा यूनियन से इंसेंटिव में वृद्धि आदि की स्वीकृत माँगें लागू करो की मांग उठाई। प्रदर्शनकारियों को कॉ. आर.के. शर्मा, कॉ. एम. चौरसिया, अमर रावत, यूनियन की कार्यकारी अध्यक्ष सोनू, महासचिव शिक्षा राणा, कार्यालय सचिव कविता सिंह ने सम्बोधित किया।

दिल्ली: प्रदर्शन करते हुए एएनएम व एलएचवी नर्सिंग स्टाफ

Printed and published by Com. Satyawan on behalf of the Central Committee of the Socialist Unity Centre of India (Communist) and printed at M/s Balaji Offset Printers, 315/21, Shahzada Bagh, Daya Basti, Delhi and published at 3A/38, WEA, Satnagar, Karol Bagh, New Delhi-110005. Editor: Com. Satyawan, Member, Central Committee, SUCI(C)."
Email: sarvaharadrishtikon@gmail.com , sarvaharadrishtikon@yahoo.com फोन नं. : 011-25726631, 9868350503